विश्व-साहित्य-माला—६

देव-दर्शन

[गांधी जी के जीवन-सम्बन्धी छः एकांकी]

लेखक

श्री शिवकुमार ओझा, 'सुकुमार' एम० ए०

विद्या मन्दिर लिमिटेड, नई दिल्ली

प्रकाशक
विद्या मन्दिर लिमिटेड,
कनॉट सरकस, नई दिल्ली ।

प्रथम बार
१९४७

श्रद्धांजलि

स्वर्गीय 'बाबू जी'

(पं० ब्रह्मदेव जी ओझा)

के

चरण-कमल

में

निवेदन

इन एकांकी नाटकों में गांधी जी के जीवन के नोकीले क्षणों की एक एक झांकी देने का प्रयास किया गया है। भाषा जान-बूझकर सरल व सुबोध रखी गई है ताकि साधारण हिन्दी जानने वाले भी एक झलक पा सकें। विद्वद्जनों की तो बात ही क्या! उनके सामने इस पुस्तिका को लेकर जाते हुए भी हाथ कांपते हैं और हृदय धड़कता है।

हां, पात्रों के विषय में एक बात कहनी है। प्रत्येक एकांकी में मुख्य पात्र सत्य है पर गौण पात्र कल्पित हैं, उनकी रचना कला की दृष्टि से आवश्यक समझी गई है, फिर भी सब कुछ मिलाकर 'निर्मल सत्य' का दर्शन ही अपना दृष्टिकोण रहा है। प्रत्येक नाटक की घटना तथा उस घटना का प्राण गांधी जी के जीवन का दर्शन ही है।

इन एकांकियों की रचना करते हुए इस बात का ध्यान रखा गया है कि स्कूल के विद्यार्थी तथा अन्य

संस्थायें इनको आसानी से रंगमंच पर खेल भी सकें। आशा है कि उनको इन नाटकों के अभिनय में कोई कठिनाई नहीं होगी।

श्री घनश्यामदास जी बिड़ला, श्री मणिलाल जी, डा० पोलक इत्यादि जिन सज्जनों के नाम का प्रयोग मैंने मुक्त रूप से किया है उनसे धृष्टता के लिये क्षमा चाहता हूं। स्वर्गीय श्री महादेव भाई व माता कस्तूर बा से क्या कहूं, वे तो स्वर्ग से हमारी इस चपलता को निरंतर देखते रहे हैं।

कालिम्पांग

१२-६-४७

—सुकुमार

विषय सूची

देव-दर्शन

पहला दृश्य

[एक फूस की झोपड़ी, टाट बरेठे के बने हैं, बास के बत्ते में चार तसवीरें टंगी हैं। एक दरवाजे के सामने है, यह गांधी जी का कैलेण्डर है। उसी के बगल में दूसरी तसवीर श्रीकृष्ण जी की है। गाधी जी तस्वीर मे चरखा कात रहे हैं; टेकली के साथ उलझे सूत को हाथ बढ़ाकर सुलझाने की चेष्टा कर रहे हैं। श्रीकृष्ण जी गोवर्धन पहाड को उंगली पर उठाये हैं, ग्वाल बाल लठिया टेके खड़े हैं। दाहिनी ओर के टाट में तीसरा और चौथा कैलेण्डर है। तीसरे मे राम पचायतन है, चौथे में महावीर जी पहाड लिये उड़े जा रहे हैं। दरवाज़े के पास ही बास की चारपाई पर एक रोगिणी वृद्धा यशोदा पड़ी है। उसकी आयु ७२ वर्ष के लगभग होगी। उसके सॉवले मुख पर झुर्रियां पड़ी हैं और ललाट की रेखाएं जुते हुए खेत की तरह दिखाई देती हैं। वृद्धा को रह-रहकर खासी आती है और खांसते-खासते सास टंग जाती है। वृद्धा काला कम्बल ओढ़े है। पास ही मूज की रस्सी के तीन मोढ़े पड़े हैं। एक पर वृद्धा का बेटा बलराम बैठा है, कुछ चिन्तित सी मुद्रा में। बलराम ३२ वर्ष का एक हृष्ट-पुष्ट नौजवान है, आधी बाह की एक कमीज पहने है जो कधे पर फट गई है। उसके सुराख से मंजे

हुए कंधे दिखाई देते हैं। मटैले रंग की धोती घुटनों तक पहुँच गई है। बड़ी-बड़ी आंखें चिन्तित मुद्रा में बड़ी मोहक लगती हैं। छोटे छोटे बालों पर धूल के कण पड़े हैं। वृद्धा की चारपाई के नीचे एक लोटे में पानी और एक गिलास रखा है। बलराम के सामने लोहे की अंगीठी में आग जल रही है। एक पतीली में पानी गरम हो रहा है; पतीली एक कटोरी से ढकी है; पास ही डलिया में तुलसी-दल रक्खा है, झोपड़ी में एक दीपक मिट्टी के दीवट पर जल रहा है।]

वृद्धा—क्यों बेटा, क्या सोच रहे हो?

बलराम—कुछ तो नहीं मां, (आग की ओर दोनों हाथ बढ़ाकर सेंकते हुए) चुपचाप हाथ सेंक रहा हूं।

वृद्धा—आज हवा तेज़ बह रही है, पछिवा तो हड्डी में तीर सी चुभ जाती है। तुमने कुछ ओढ़ नहीं लिया?

बलराम—बूंदा-बूंदी में आज खेत से आते हुए धोती गीली हो गई। अभी सूखी जाती है। मां, तुम चिन्ता न करो, आग के पास बैठा तो हूं। अंगीठी तुम्हारे पास कर लूं? (अंगीठी चारपाई के नज़दीक खींचता है)

वृद्धा—नहीं बेटा, मुझे अब जाड़ा क्या लगेगा? बहुत दिनों से इससे जान-पहचान हो गई है। मुझे तुम्हारी ही फिकर लगी है। (खांसते हुए) कहीं खेत की

हवा लग गई तो अकड़ जाओगे, वे मारे मौत आजायगी।

बलराम—मां, तुम तो नाहक़ फिकर करती हो। अब पानी में तुलसी के पत्ते डाल दूं ?

वृद्धा—पानी खोल गया हो तो डाल न दो।

बलराम—(चिमटी से कटोरी उठाता है, सफेद भाप हवा में मंडराने लगती है। तुलसी के पत्ते डलिया से लेकर पतीली में डालते हुए) गोल मिर्च कितनी, मां ?

वृद्धा—सात गिनकर डाल दे, बेसी नहीं।

बलराम—(एक कागज़ की पुड़िया से गोल मिर्च निकालता है, धीरे धीरे सात गिनता है और उसे पतीली में छोड़ कर कटोरी से ढक देता है) कितनी देर तक यह पकेगा, मां ? (फिर चिन्ता की मुद्रा में बैठ जाता है)

वृद्धा—यही, थोड़ी देर। बेटा, तुम कुछ न कुछ सोच ज़रूर रहे हो। बोलो न, क्या सोचते हो ? मुझसे क्यों छिपाते हो ? क्या कोई छिपाने लायक बात है ?

बलराम—नहीं मां, छिपाने लायक तो कोई बात नहीं है, पर तुम जानकर बेकार में दुखी होओगी।

ऐसी अवस्था में मैं तुम्हें दुखी नहीं करना चाहता।

वृद्धा—दुखी नहीं करना चाहता, तो बताता क्यों नहीं? तू इतना नहीं समझता कि (खासी चढ़ जाती है ज़ोर की। बलराम उठकर मा का सिर दोनों हथेलियो से दबाता है)........

बलराम—मां, तुम बोलो मत, नहीं तो खांसी और चढ़ जायगी।

वृद्धा—तो, तू ही तो बोलवाता है, क्यों नहीं बताता? क्या सोच लगी है तुझको?

बलराम—ले सुन, मैं इसी फेर में हूं कि तेरे.....

(इतने मे दरवाज़े की साकल खटखटाने की आवाज़ आती है)

वृद्धा—देख तो कौन है?

(बलराम उठकर दरवाज़ा खोलता है। सामने कृष्णा खड़ी है—लाल किनारे की पीली साड़ी पहने हुए, हाथ मे कगन-चूड़ी, पाव में बीछिया, नाक में कील, सस्ते हरे चारखाने की कुरती आधी बाहो तक, माग मे सिदूर की मोटी रेखा, उम्र लगभग २० साल)

कृष्णा—क्यों भइया, दादी की तबीयत कैसी है?

बलराम—वैसी ही है। आओ, देखो न!

(कृष्णा वृद्धा की ओर जाती है, बलराम किवाड़ बन्द

कर पीछे पीछे आता है)

कृष्णा—(दादी के पाव पर सिर रखकर प्रणाम करती है, फिर तलवे पर हाथ मलकर धूल को सिर-आंखो में लगाती हुई) दादी, पांव छूती हूं।

वृद्धा—कौन है रे ?

कृष्णा— मै हूं; दादी, कृष्णा।

वृद्धा—किशुना, जियो बेटी। दूधे-पूते भरी रहो। सोहाग अचल हो। आज बहुत दिन पर आई।

कृष्णा—हां, दादी, घर के काम-धंधे से फुरसत नहीं मिलती; जो कुछ थोड़ा समय बचता भी है तो सूत कातने में लग जाती हूं।

वृद्धा—बड़ा अच्छा करती हो, बेटी। जरा मेरे पास आना तो, जी भर के देख तो लूं।

कृष्णा—(कृष्णा मोढ़ा घसीट कर दादी के पास आजाती है) देखो न दादी।

वृद्धा—(कृष्णा के सिर, पीठ, बाँह पर हाथ फेरती हुई) आजकल तो कुछ दुबली हो गई हो बेटी, तुम्हें भी कोई फिकर सताती है क्या ?

कृष्णा—नहीं दादी, फिकर तो क्या, पर यही नोन-तेल-लकड़ी की ही चिन्ता क्या कम है ? हां,

तुम्हारी तबीयत कैसी है ?

वृद्धा—अब मेरी तबीयत क्या पूछती है ? बुलाने पर भी मौत नहीं आती। (खासते हुए) यही खांसी कभी-कभी दिक़ कर देती है।

कृष्णा—भइया, कोई दवा क्यों नहीं लाते ?

बलराम—दवा क्या लायें किशना। ये कहती है कि तुलसी-दल छोड़कर और कुछ मुंह में डालूंगी ही नहीं। देखो, काढ़ा बना रहा हूं।

वृद्धा—बलराम पागल है बेटी। दवा दवा करके सिर खाने लगता है (खासते हुए) मौत की भी कोई दवा होती है। चलते चलाते सराब मिली दवा क्यों पियूं ?

कृष्णा—मगर सब दवा में शराब तो नहीं मिलाई जाती, दादी।

वृद्धा—अरे तू भी पूरी पगली है क्या ? भला बता न, कोई डाकदर, वैद बतायेगा वह किस दवा में शराब मिलाता और किस में नहीं ? हां, (खासते हुए) पूछने पर झूठ जरूर बोल देगा।

बलराम—अच्छा, बैद जी तो जड़ी-बूटी कूट-काट कर दवा बनाते हैं, उनकी दवा क्यों नहीं पीती ?

वृद्धा—तो और करती क्या हूं ? यह काढ़ा एक बैद ही ने तो बताया है। अच्छा जाने दे यह बात। हां, बेटी, आजकल सहर तू गई थी ? गांधी जी का कोई समाचार मिला ?

कृष्णा—(अंगीठी के पास हाथ सेकती, फेरती हुई) गई तो थी आज ही दादी, एक खबर तुम्हारे लिए लाई हूं।

वृद्धा—मेरे लिए ? कैसी खबर है ? किसने दी ?

कृष्णा—बड़ी अच्छी खबर है, सुनकर खुश हो जाओगी। अच्छा बोलो (चपल भाव से) सुनाऊंगी तो क्या दोगी ?

वृद्धा—असीस छोड़कर और क्या है मेरे पास बेटी ? भला कहो तो, वह समाचार सुनूं।

कृष्णा—अच्छा, सुनो। आज मैं सूत लेकर गई थी गांधी-आश्रम।

वृद्धा—हां

कृष्णा—तो वहां पर मिल गये वह सेठ।

वृद्धा—कौन सेठ ?

कृष्णा—अरे वही, खद्दर वाले।

वृद्धा—खद्दर वाले ? मुझे तो कुछ याद नहीं

आता, बेटी।

कृष्णा—अरे वह जो कभी कभी दूकान पर मिल जाते थे, बलराम भइया की उमर होगी। तुमको 'बूढ़ी माई' कह कर पुकारते थे।

वृद्धा—हाॅं, हाॅं, कुछ-कुछ याद आरहा है। तो वे भला अब हमको क्यों याद करने लगे?

कृष्णा—नहीं, दादी, ऐसा न कहो।

वृद्धा—क्यों?

कृष्णा—वे बड़े भले आदमी हैं, उन्होंने मुझसे पूछा मेरे गांव का नाम।

वृद्धा—तो?

कृष्णा—मैंने गांव का नाम बताया।

वृद्धा—हां।

कृष्णा—तो उन्होंने पूछा कि तुम 'बूढ़ी माई' को जानती हो?

वृद्धा—अच्छा!

कृष्णा—मैं तो कुछ न समझी, हक्की बक्की सी उनका मुंह देखने लगी।

वृद्धा—फिर क्या हुआ?

कृष्णा—उन्होंने बताया, 'वह करीब सत्तर साल

की बुढ़िया है, तुम्हारे गांव में रहती है, उसका एक हमारी उमर का जवान बेटा है, वह यहां सूत लेकर पहले आया करती थी, अब दिखाई नहीं देती।'

वृद्धा—इतना कह डाला?

कृष्णा—हां दादी, तब तो मैं समझ गई कि वह तुम्हें पूछ रहे हैं। मुझे भी याद आगई कि बचपन में जब तुम कभी कभी हमको लेकर उस दूकान पर जाती थी तो वह तुमसे बड़े चाव से बातें करते थे और 'बूढ़ी माई' कहकर पुकारते थे।

वृद्धा—हां, बेटी, हैं तो सचमुच वह बहुत भले। सुना है कलकत्ते के किसी भारी सेठ के लड़के हैं, पर हमसे तो बच्चों जैसी बातें करते हैं। उनके हिया में दया बहुत है। हाँ, तो उन्होंने फिर क्या कहा?

कृष्णा—पूछने लगे 'अब क्यों नहीं आती?'

वृद्धा—तो तुमने क्या कहा?

कृष्णा—मैंने बताया कि वह बीमार है, खांसी आती है, चारपाई पर पड़ी रहती है।

वृद्धा—बड़ा बुरा किया, बेटी।

कृष्णा—क्यों? इसमें बुराई क्या थी?

वृद्धा—बेचारे का दिल दुखेगा। कह दिया होता, 'अच्छी है, आज नहीं आई।'

कृष्णा—तो तुमने पहले से तो सिखाया न था, नहीं तो यह भी कह आती।

(तीनों हंसते हैं)

वृद्धा—अच्छा, बीमारी का हाल सुनकर उन्होंने क्या कहा?

कृष्णा—पहले तो जरा उदास हुए, फिर कहने लगे, 'मैं उसे देखना चाहता हूं, हमें अपने गांव की राह बता दो।'

वृद्धा—अरे!

कृष्णा—फिर मैंने सीधी सड़क बता दी।

वृद्धा—बेचारा इस जाड़े-पाले में नाहक परेशान होगा। मुर्दा सड़क कितनी ऊंची-नीची है। कच्ची सड़क, तिस पर बीच बीच में गड्ढे होगये हैं। सब में पानी और कीचड़ भरा है। तुमने सड़क क्यों बता दी?

कृष्णा—तो क्या करती?

वृद्धा—कुछ टाल-मटोल कर दिया होता।

कृष्णा—दादी, तुम्हारी भी बातें अजीब होती हैं।

अरे वह क्या सचमुच आये ही जाते हैं, जो इतना पछताने लगी। हां, कहते जरूर थे कि आज किसी समय 'बूढ़ी माई' के दर्शन……

(इतने मे दरवाज़े पर मोटर का हार्न सुनाई देता है)

कृष्णा—(चौंककर) आगये क्या ?

वृद्धा—जा, देख तो।……..(कृष्णा दौड़कर बाहर जाती है)

(बलराम के चेहरे पर चंचलता नाट्य करती है। कुछ सूझता नहीं। इतने बड़े आदमी के आने पर क्या करे, कहा बैठाये)

बलराम—मां, वह बैठेंगे कहां ?

वृद्धा—घबरा न बेटा, भले आदमी सब समझते हैं। वह मोढ़ा ठीक कर रख दे, अंगीठी जरा पीछे हटा दे।

(बलाराम मोढ़ा अगोछे से झाड़-पोछकर ठीक करता है, अंगीठी चारपाई से जरा अलग रखता है। इतने में कृष्णा दौड़ी आजाती है)

कृष्णा—(घबराई हुई सी) वही हैं, दादी। लाऊं उनको ?

वृद्धा—लाओ बेटी।

कृष्णा—सब ठीक है न ?

वृद्धा—तू जाकर बुला ला; यहां ठीक क्या करना है ।

(कृष्णा फिर जाती है, बलराम दिये की लो जरा तेज कर देता है। वृद्धा खासी रोक कर चारपाई पर शान्त मुद्रा में लेट जाती है। इतने में आगे आगे कृष्णा और उसके पीछे बिड़ला जी आते हैं। घनश्यामदास जी लगभग तीस साल के युवक हैं, चेहरा चमकता हुआ, बन्द कालर का ऊनी कोट पहने, सिर पर गांधी टोपी, कमर में खद्दर की धोती, पावों में मोज़े, मोजे पर पम्प शू, कंधे पर एक ऊनी चादर और हाथ में छड़ी है। देखते ही बलराम दोनो हाथ जोड़कर नमस्ते करता है। मुंहसे बोली नहीं निलकती। जवाब में भी वैसा ही मौन नमस्ते मिलता है)

कृष्णा—(बिड़ला जी की ओर इशारा करके) ये आगये, दादी।

(वृद्धा उठने की चेष्टा करती है; बिड़ला जी रोकते हैं और आराम से लेटे रहने के लिये कहकर वृद्धा के पांव छूते हैं)

वृद्धा—जियो बेटा, जुग जुग जियो। धन-जन सब बढ़े, कहो बड़ी तकलीफ़ उठाई।

बिड़ला जी—नहीं माई, तकलीफ़ कैसी ? इधर बहुत दिनों से तुम मिली नहीं तो आज मन कुछ

चिन्तित सा हो उठा। पूछने पर मालूम हुआ तुम बीमार हो, इसलिये चला आया कि दर्शन भी करूंगा और आसीस भी लेता आऊंगा।

वृद्धा—मेरे भाग बड़े ऊँचे हैं, बेटा, जो तुम इतनी दूर से हमें देखने आये।

बिड़ला जी—इसमें कौन सी बड़ी बात है माई। हां, तुमने कोई दवा ली या नहीं ?

वृद्धा—अब मौत की दवा कौन देगा बेटा ? वैसे काढ़ा तो पी रही हूं।

बिड़ला जी—किसी अच्छे डाक्टर को क्यों न भेज दूं, तुम्हें दवा भी देंगे और रोज देख जाया करेंगे।

वृद्धा—नहीं बेटा, अब मेरी दवा जमराज के पास है।

बिड़ला जी—तो फिर हमें संतोष कैसे होगा ?

वृद्धा—कैसे बताऊं। (कुछ सोचकर) अच्छा, एक काम कर सकते हो ?

बिड़ला जी—(बड़ी उत्सुकता से) वह क्या ?

वृद्धा—अच्छा ज़रा उस मोढ़े पर आराम से बैठ जाओ तो कहूं।

(बलराम मोढ़ा ज़रा आगे खिसकाता है। बिड़ला जी उस पर बैठ कर कृष्ण और बलराम को भी बैठने का इशारा करते हैं, पर मारे अदब के दोनो खड़े रहते हैं।)

बिड़ला जी—(उत्सुकता से वृद्धा का मुह देखते हुए) हां, अब कहो।

वृद्धा—तुम्हें गांधी जी का कुछ पता है ?

बिड़ला जी—इधर तो कोई चिट्ठी नहीं आई, पर वे वहीं होंगे।

वृद्धा—कहां ?

बिड़ला जी—साबरमती आश्रम।

वृद्धा—यहां से कितनी दूर है ?

बिड़ला जी—कितनी दूर बताऊँ ?

वृद्धा—क्यों ?

बिड़ला जी—कई सौ कोस है। अपना काम तो बताओ। माई, इन भूलभुलैयों से तुम्हें क्या मतलब ?

वृद्धा—क्या बताऊँ, बेटा, असम्भव है।

बिड़ला जी—जरा सूनूं भी तो।

वृद्धा—सुनकर क्या करोगे ? नाहक तुम्हारा जी दुखी होगा। काम नहीं होसकता।

बिड़ला जी—माई, तुम काम तो बताती नहीं,

अपने ही मन से पछताये जाती हो।

वृद्धा—अच्छा न मानोगे तो सुनो।

बिड़ला जी—(बड़े चाव से वृद्धा की ओर ताकते हुए) कहो।

(कृष्ण और बलराम भी बड़ी उत्सुकता से मा का मुंह ताक रहे हैं)

वृद्धा—मैं गांधी जी के दर्शन करना चाहती हूं।

बिड़ला जी—(कुछ चिन्तित भाव से) गांधी जी के दर्शन! (सोचते हैं)

वृद्धा—मैंने तो पहले ही कहा था कि नहीं होसकता।

(वृद्धा की खांसी बढ़ जाती है, रोक नहीं सकती।)

बिड़ला जी—खांसी बहुत जोर पर है, माई?

वृद्धा—नहीं, बेटा, जोर तो क्या यह यूं ही कभी-कभी चढ़ जाती है।

बिड़ला जी—गांधी जी का दर्शन क्यों चाहती हो, माई?

वृद्धा—बेटा, यह न पूछो। अब केवल एक यही लालसा बाक़ी है। यह पूरी हो जाय तो राम-राम करके बड़ी शान्ति से मैं मरूं। मैं रात-दिन उनकी याद करती

रहती हूं। वह देखो सामने (गांधी जी की तसवीर दिखा-कर) कैसे सूत कात रहे हैं। यही देख देखकर तो मैं और भी उमग से सूत काता करती थी। इधर छः महीने से खाट पकड़ ली तब से सूत कातना छूट गया।

बिड़ला जी—तो क्या छः महीने से बीमार हो?

वृद्धा—ऐं...ऊं (छिपाने की चेष्टा असफल होती देख कर) हां, छः तो नहीं यही/तीन-चार महीने हुए होंगे। तो गांधी जी के दर्शन नहीं हो सकते? (मन उदास कर, जलते दीपक की लौ की ओर ताकते हुए) मेरे भाग खोटे हैं नहीं तो दर्शन क्यों न होते? हां, वह देवता हैं, यूं ही न मिल जायँगे।

बिड़ला जी—देवता कैसे हैं, माई?

वृद्धा—तुम इतना भी नहीं जानते बेटा, और उन्हीं के साथ रहते हो! (कुछ सोचकर) ठीक भी है, ग्वाल-बालों ने मोहन को देवता कब जाना।

बिड़ला जी—(बड़ी श्रद्धा के साथ वृद्धा को देखते हुए) अच्छा माई, तू उदास न हो। हम किसी न किसी तरह तुम्हारे देवता को लायेंगे।

वृद्धा—बेटा, आसान नहीं।

बिड़ला जी—पर कोशिश करना तो अपने हाथ

में है, फल भगवान जाने।

वृद्धा—नसीब मेरा खोटा है, बेटा। वैसे तुम कोशिश करो। यदि दर्शन होगये तो, मैं क्या, मेरा रोआं रोआं तुम्हें असीस देगा और मैं शान्ति से मर सकूंगी (कुछ देर चुप होकर) और यदि न हुआ तो······

बिड़ला जी—(बात काटकर) ऐसी बात सोचती ही क्यों हो, माई ? मैं उनके बुलाने के लिये कुछ भी उठा न रक्खूंगा। तुम चिन्ता न करो।

वृद्धा—चिन्ता न करूंगी बेटा; पर यह तो अपने बस की बात नहीं।

बिड़ला जी—अच्छा माई, अब अज्ञा दो, चलूं।

वृद्धा—अरे इतनी रात गये सहर जाओगे। जाड़े का दिन, ऐसी तेज़ पछिवा, तिस पर बादल घिरे हैं, कैसे जाओगे ? (खाँस कर) हम तुम्हें न जाने देंगे।

बिड़ला जी—नहीं माई, जाना ज़रूरी है। हमें कोई कष्ट न होगा। गाड़ी तो है, जरा देर में पहुंच जाऊंगा।

वृद्धा—अच्छा, न मानोगे तो फिर मैं क्या कर सकती हूं। भगवान तुम्हारी रक्षा करेंगे।

बिड़ला जी—(वृद्धा के चरण छूते हुए) मैं गांधी

जी को लाने की भरसक चेष्टा करूंगा।

वृद्धा—जियो, सुखी रहो। अपनी 'बूढ़ी माई' को न भूलना।

(बिडला जी चल देते हैं, कृष्णा और बलराम दोनों बाहर पहुचाने जाते हैं)

वृद्धा—उनके दर्शन करना मेरे भाग्य में कहाँ? (अकेले बडबड़ाती सी) प्रलय के पानी से गोकुल को बचाया गोवरधन उठाकर; मोहन, आज फिर आये चरखा लेकर।...उबार न लो मुझको। सामने बैतरनी दिखाई देती है, किसके भरोसे पार जाऊं (मौन हो चिन्तित मुद्रा से गांधी जी और श्रीकृष्ण जी के कैलेण्डर को देखती है)

(बलराम और कृष्णा का प्रवेश)

वलराम—बड़े अच्छे आदमी हैं, मां। जाते हुए हमको दस रुपए देते गये तुम्हारे पथ्य-पानी के लिये, और कह गये कि हम गांधी जी को जरूर लायेंगे।

वृद्धा—वेटा, तुमने रुपया उनसे क्यों लिया? विना मिहनत किये पैसा लेना पाप है।

वलराम—तो अब क्या करूं, मां? वे तो चले गये। यदि न लेता तो उनका जी दुखी न होता?

वृद्धा—और ले लेने से मेरा जी दुखी नहीं होता ? (खांसते हुए) अच्छा रख दे किसी ब्राह्मण-बिशुन को दे देना।

कृष्णा—और वे फिर आयें तो उन्हीं को क्यों न लौटा दें ?

वृद्धा—नहीं, अब लेकर लौटाना ठीक नहीं। किसी पुन्न के काम में ही लगाना ठीक रहेगा।

कृष्णा—दादी, तुमने काढ़ा नहीं पिया ? लाकर दूं ?

वृद्धा—दे न दे; मैं तो भूल ही गई थी।

(कृष्णा अंगीठी पर से आंचल के दोनों खूंट पकड़कर पतीली उतारती है। हाथ से कटोरी उठाती है। हाथ में फफोले से पड़ जाते हैं)

वृद्धा—(उचककर) हाथ तो न जला ? बड़ी चंचल लड़की है। चिमटे से क्यों न उतारा ?

(कृष्णा—(उंगलियों को मुंह से फूकते हुए) नहीं, दादी, जला नहीं है। तू चिन्ता न कर।

(बलराम काढ़ा निकालने की चेष्टा करता है।)

कृष्णा—(मना करती है) नहीं, भइया, रहने दो। मैं दिये देती हूं।

(कटोरी को पानी में ठंढी कर उसी में काढ़ा देती है। बलराम वृद्धा को चारपाई पर उठाकर बैठाता है वह भी अंगोछे के खूट से काढ़ा लेकर मुँह से फूंकने लगती है। भाफ का धुंआ उड रहा है)

कृष्णा—अब मैं चलूं, दादी, बहुत रात गई।

वृद्धा—अच्छा जाओ, नींद आरही होगी। डर तो न लगेगा। कहो तो बलराम को भी साथ कर दूं।

कृष्णा—नहीं, दादी, डर कैसा? चार क़दम पर तो घर है। अभी बाबू जग रहे होंगे।

(कृष्णा वृद्धा के चरण छूकर प्रणाम करती है। वृद्धा असीस देती है। कृष्णा का प्रस्थान। बलराम दरवाज़े तक पहुचाकर किवाड़ बन्द कर लेता है। आकर एक मोढ़े पर बैठता है और अंगीठी की बुझती हुई आग से सेकता है)

वृद्धा—(काढा जरा सा पीकर) तो तुमने यह न बताया कि तुम क्यों चिंतित हो?

बलराम—बतला तो दिया कि तुम्हारे जानने से कोई लाभ नहीं। बेकार दुखी होओगी।

वृद्धा—(जरा तिनुककर) तो तुम बताते क्यों नहीं? बड़े समझदार बन गये हो।

बलराम—अच्छा न मानोगी, तो सुनो। मैं सोच रहा हूं कि तुम्हारे न रहने पर मैं अकेले कैसे रहूंगा।

(वृद्धा के चेहरे पर विनोद की रेखा दौड़ती है) घर तो काट खाने दौड़ेगा, मैं क्या करूंगा ?

वृद्धा—तू रह गया, पूरा पागल। अरे मैं क्या अमर होकर आई हूं ? (काढ़ा पीते हुए) जाने कहां मेरा कागद भूल गया है जो दैव बुलाता नहीं।

बलराम—तो मां, क्या मेरी चिन्ता तुम्हें जरा भी नहीं ?

वृद्धा—है क्यों नहीं। जिसको अपने खून से सींचा है, अपने छाती के दूध से पाल पालकर इतना बड़ा किया है। (काढ़े का घूंट लेती है) उसके लिये चिन्ता न करूंगी तो किसकी चिन्ता करूंगी ? पर इस चिन्ता से लाभ ? आखिर जब जाना ही है तो हीला-हवाला क्या ?

बलराम—अच्छा मां, एक बात पूछूं ? बताओगी ?

वृद्धा—पूछो न, उसमें संकोच क्या ?

बलराम—क्या गांधी जी सचमुच देवता हैं ?

वृद्धा—हां, बेटा, मैं तो ऐसा ही मानती हूं। वे भारत का उद्धार करने आये हैं। मैं तो अब मर जाऊंगी, पर देख लेना हमारे देस का दुख दलिद्दर

अगर कोई छुड़ावेगा तो वह गांधी जी ही होंगे। (काढ़े की कटोरी चारपाई से नीचे रखते हुए) अह, ऊंह उनके दर्शन न होंगे।

(बलराम मां को ठीक से पकड़कर चारपाई पर लेटाता है। वृद्धा राम राम करती है)

वृद्धा—जा बेटा, अब तू भी सो जा।

(बलराम जाने लगता है, परदा गिरता है)

दूसरा दृश्य

[स्थान-दिल्ली का स्टेशन, लम्बा प्लेटफार्म, बिजली के बल्ब लम्बे बरामदे में जलते हैं। बड़ी सी घड़ी खम्भे में लगी है जिसमे ३ बजकर ४५ मिनट हुए हैं। जहां तहां कुली जाड़े के मारे सिकुड़े हुए खड़े हैं। चारों ओर शान्ति छाई है। स्टेशन बिल्डिङ्ग के एक-दो कमरो में ढके हुए टेबुल लैम्प जलते हैं एक-दो बाबू चुपचाप काम करते हैं, रह रह कर इंजन की भक-भक आवाज सुनाई देती है। इसी प्लेटफार्म पर बिड़ला जी एक और सज्जन के साथ टहल रहे हैं, वह शायद उनका शोफर है]

बिड़ला जी—(एकाएक एक लैम्प के पास रुक कर जेब से एक तार निकालते हैं और खोलकर पढ़ते हैं—'कमिङ्ग टुमारो फोर मार्निङ्ग—गाधी'। अपने साथी को एक बैंच पर बैठ जाने का इशारा करते हैं। वह जाकर बैठ जाता

है। बिड़ला जी जरा दूर वाले लैम्प के पास खड़े होकर कुछ सोचते हैं, फिर स्वतः बड़बड़ा उठते हैं) धन्य हो प्रभो! इतनी जल्दी बापू को भेज दिया। बूढ़ी माई के भाग्य जगेंगे क्या? अभी कौन कह सकता है। (टहलते हैं)

[इतने में घटी बजती है और दूर पर ट्रेन के आने का शब्द जान पड़ता है। परदे के पीछे से ट्रेन के आने की आवाज़ आती है। बिड़ला जी अपने साथी के साथ सजग हो जाते हैं। तब तक एक डिब्बे से गांधी जी और मि० देसाई उतरते दिखाई देते हैं। गांधी जी का सांवला रंग, नाटा क़द, लम्बी बाहें, साधारण मूँछे, घुटने तक खद्दर की धोती पहने, पावों में चप्पल, गले से बाहों तक एक मामूली कम्बल ओढ़े नाक पर ऐनक दिये हैं। देसाई जी यही अधेड़ उमर के आदमी हैं। गोरा रंग, सिर पर गांधी टोपी, खद्दर का कुरता उस पर ऊनी जवाहर कोट, खद्दर की धोती अंगूठे तक लटकती, पावों में चप्पल और एक हाथ में झोला, कंधे पर एक ऊनी चद्दर भी है।]

बिड़ला जी—(गांधी जी के चरण छूते हुए) बापू, रेल में कष्ट तो न हुआ?

गांधी जी—(बिड़ला जी के सिर पर हाथ फेरकर) सुखी रहो, कष्ट तो अपने अपने मन में बसता है, घनश्याम। रेल में कष्ट कैसा?

[शोफर भी गांधी जी के चरण छूता है। गांधी जी

चलते चलते रुक जाते हैं और उसे आशीर्वाद देते हैं। वह पीछे खड़ा हो जाता है। बिड़ला जी देसाई जी को हाथ जोड़कर नमस्ते करते हैं। देसाई जी भी जवाब देते हैं। शोफ़र देसाई जी का झोला लेकर चलना चाहता है पर देसाई जी इशारे से मना कर देते हैं। अब गांधी जी अपना दाहिना हाथ बिड़ला जी के कंधे पर रखकर चलते हैं।]

बिड़ला जी—कितने दिन रहने का प्रोग्राम है बापू?

गांधी जी—रहने का प्रोग्राम कैसा? अभी पांच बजे वाली ट्रेन से अहमदाबाद जाऊँगा।

बिड़ला जी—(विस्मित होकर) अरे, इतनी जल्दी? आप रुक नहीं सकते?

गांधी जी—असम्भव। (बिड़ला जी उदास हो जाते हैं, देसाई जी की ओर देखकर) महादेव, प्रार्थना का भी समय हो रहा है।

देसाई—हां बापू, समय तो हो गया है।

गांधी जी—तो फिर यहीं वेटिङ्ग रूम में चलो न। वहीं प्रार्थना हो जायगी। (देसाई जी के जवाब का इन्तजारी किये बिना ही वेटिङ्ग रूम की ओर चलते हुए) हां, घनश्याम, तुमने रुकने की बात क्यों पूछी?

बिड़ला जी—(आशा और निराशा के मिश्रित भाव

चेहरे पर नाट्य करते हैं) क्या बताऊँ बापू, जब रुकना असम्भव है तो कहने से लाभ ?

गाँधी जी—तुम अपना मन्तव्य तो कहो।

बिड़ला जी—यहां से दस मील की दूरी पर एक बीमार बुढ़िया चारपाई पर पड़ी है। उसने अपना जीवन सूत कातने में बिताया। अब मरने से पहले आपका दर्शन चाहती है।

गाँधी जी—(कुछ सोचकर) तो चलो जल्दी करो, गाड़ी लाये हो न ?

बिड़ला जी—गाड़ी तो लाया हूं पर ऐसे जाड़े में, माघ की सिपहरी के सामने खुली गाड़ी में आपको ले चलना मैं ठीक नहीं समझता।

गाँधी जी—यह सब सोचकर समय नष्ट कर रहे हो, घनश्याम। हमें कुछ न होगा, तुम चलो तो (खम्भे पर लगी बड़ी घड़ी में देखकर) चार बज के दस मिनट हुए हैं। पांच तक लौटकर मेल पकड़ लेंगे।

बिड़ला जी—मुश्किल है, बापू। आप कहते हैं तो चलिये, पर यह तपस्या कठिन जान पड़ती है।

गाँधी जी—तुम इसकी चिन्ता न करो। आज की प्रार्थना यही रहेगी। तुम वृद्धा के घर जल्दी चलो।

(सभी जल्दी-जल्दी पाव बढ़ाये स्टेशन से बाहर कार की ओर जाते हैं। परदा गिरता है।)

तीसरा दृश्य

[स्टेज पर कोई प्रकाश नहीं है, दृश्य वृद्धा की झोंपड़ी का है; एक ओर से मामूली प्रकाश जरा सा उजाला करने के लिये पड़ रहा है। वृद्धा चारपाई पर पड़ी राम राम कर रही है। बीच बीच मे खॉसती भी है। बाहर से किसी के खटखटाने की आवाज आती है।]

वृद्धा—बलराम, ऐ बलराम।

बलराम—(परदे के पीछे से) ऊं।

वृद्धा—बलराम बेटा, उठो तो देख दरवाजे पर कौन आया है?

बलराम—(अगड़ाइया लेता मुह फैलाता-बन्द करता आता है) क्या है मां?

वृद्धा—जरा देख तो इतने सवेरे सवेरे कौन दरवाजा खटखटा रहा है?

बलराम—हवा से सांकड़ किवाड़ से लड़लड़ कर बजती होगी, मां। भला इस जाड़े में हमारे घर इतने सवेरे कौन आयगा?

(किवाड़ खटखटाने की आवाज आती है)

वृद्धा—नहीं, नहीं तू जाकर देखता क्यों नहीं ? कोई आया जरूर है। डरता है क्या ?

बलराम—नहीं मां। अच्छा, दिया जलाकर जाऊँ ?

वृद्धा—जला न दे।

(बलराम दीपक जलाता है। स्टेज पर प्रकाश हो जाता है, वह बाहर जाता है)

वृद्धा—भला इस देव-वेला में मेरे घर कौन आया ? ब्रह्म-मुहूर्त में साधू-संत को छोड़कर कौन आ सकता है ? कोई धूनी रमाने के लिये लकड़ी-आग लेने आया होगा। कभी कभी रामचरनदास तो…(इतने मे आगे आगे बलराम और पीछे से बिड़ला जी, गाधी जी, देसाई जी आते हैं, वेश-भूषा पूर्ववत् है)

बिड़ला जी—(वृद्धा के पाव छूकर) माई, ये लो तुम्हारे देवता आगये।

(गाधी जी हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं, देसाई जी भी नमस्कार करते हैं, वृद्धा हक्की बक्की सी होकर उठने लगती है)

गांधी जी—नहीं मां, पड़ी रहो। हम तो तुम्हारे बच्चे हैं (हाथ से वृद्धा को उठने से रोकते हैं)

वृद्धा—(उसकी आखे चमकती हैं। गाल पर की

रेखाऐं स्पष्ट हो उठती हैं, ज़रा देर तक गांधी जी की ओर एकटक ताकती है, फिर बोलती है) मैं सपना तो नहीं देखती ?

गांधी जी—नहीं मां, तुम्हारे दर्शनों के लिये आगया।

वृद्धा—मेरे मोहन, मेरे देवता (आंखों से आंसू गिरते हैं, लपककर गांधी जी के पांव पकड़ती है, परदा गिरता है)

अग्नि-परीक्षा

अग्नि-परीक्षा

[जहाज का केबिन—तीन कुर्सियां पड़ी हैं, एक आराम कुर्सी, दो बेत की बाहदार सादी कुर्सियां—स्टेज पर साधारण प्रकाश है। आराम कुर्सी पर मि० गांधी जरा पीछे की ओर झुके हुए पड़े हैं। अवस्था २८ वर्ष है। सांवला रंग, नाटा कद, लम्बी बाहें, सजी हुई मूँछें, काले रंग का गरम सूट पहने हैं, कमीज और कालर सुफ़ेद हैं, टाई का रंग काले चेक डिजाइन का है, हाथ पर घड़ी बँधी है। कप्तान दूसरी कुर्सी पर बैठा है। वह भी लगभग ३५ वर्ष का गोरा जवान, हट्टा-कट्टा शरीर, गरम-सूट पहने हुए, दोनों हाथों पर ठुड्डी को रोककर मि० गांधी की ओर देख रहा है। दोनों व्यक्ति कुछ सोच रहे हैं, समस्या जटिल जान पड़ती है]

कप्तान—तो फिर उतरने के विषय में आपने क्या निश्चय किया?

मि० गांधी—कुछ समझ में नहीं आता क्या करना चाहिए। कोरेण्टाइन में पड़े पड़े इतने दिन होगये। दोनों जहाज़ के यात्रियों को मेरी वजह से न जाने कितने कष्ट उठाने पड़े। दादा अब्दुल्ला को रोज़

नई नई धमकियां गोरों की ओर से दी जा रही हैं, इधर हमारे पूरे परिवार का प्राण संकट में पड़ा है।

कप्तान—आज बत्तीस दिनों के बाद 'नादिरी' और 'कुर्लैण्ड' दोनों के मुसाफिरों को उतारने का हुक्म सरकार ने दे दिया है, इसलिये उनकी चिन्ता करने की आपको आवश्यकता नहीं। हां, दादा अब्दुल्ला की स्थिति जरूर शोचनीय है; पर हमने तो सुना है कि वह सभी नुक़सान उठाने को तैयार हैं पर आपका साथ न छोड़ेंगे।

मि० गांधी—इसी से तो हमारी जिम्मेदारी और भी बढ़ गई है। आखिर हमारा भी तो कुछ धर्म है, हमारी जरा सी भूल से दादा अब्दुल्ला के व्यवसाय में लाखो रुपये का धक्का लग सकता है।

कप्तान—अपने परिवार के विषय में तो अब आपको कुछ न कुछ निश्चय कर ही लेना चाहिए, देर करने से परिस्थिति के और भी बिगडने की सम्भावना है। हमने सुना है कि यहां के गोरे आपको जान से मार डालने पर उतारू हैं।

मि० गांधी—अपनी चिन्ता तो मुझे विशेष नहीं, हां, परिवार की चिन्ता जरूर लगी है क्योंकि मेरे

स्त्री-पुत्र होने के सिवा उनका और दोष ही क्या है? उनको निरापद जहाज़ से उतारने का कोई ढंग नहीं दिखाई देता।

कप्तान—एक उपाय तो है। यदि आप पसन्द करें तो कहूं।

मि० गांधी—कहिये, कहिये, कहने में सकोच की कौन सी बात है।

कप्तान—मि० एसकम्ब ने खबर भेजी है कि आपको और आपके परिवारवालों को संध्या समय उतार दिया जाय। डाक सुपरिण्टेण्डेण्ट आपको उतार ले जायँगे। गोरे लोग बेतरह बिगड़े हुए हैं और दिन को उतारने पर उन्मत्त होकर अगर मार भी डालें तो कोई आश्चर्य नहीं।

(दोनो गम्भीर मुद्रा में कुछ सोचते हैं। मि० गांधी का चेहरा कभी तो खिल उठता है और कभी म्लान होकर गिर जाता है।)

कप्तान—(शांति भंग करते हुए) इस सुझाव के विषय में आपकी क्या राय है?

मि० गांधी—क्या बताऊँ? अपने परिवार का प्राण संकट में डालने का हमें क्या अधिकार है? मैं

उनका 'सिरजनहार' तो हूं नहीं। अब रही बात मेरी, तो मैं भी उनके साथ चला जाऊँगा। उन लोगों को अकेले भेजना भी तो संकट से खाली नहीं। कौन जाने क्या बीते। वैसे साथ रहेंगे तो संतोष तो रहेगा।

(मि० गांधी के चेहरे पर ग्लानि के कुछ चिन्ह दृष्टि-गोचर होते हैं, कप्तान भी कुछ प्रसन्न नहीं दिखाई देता।)

कप्तान—ठीक है, बेकार बवाल मोल लेने से क्या लाभ ?

(फिर दोनों मौन हो जाते हैं, मानों कोई गर्हित कार्य करने जा रहे हो। इतने में मि० लैटन आजाते हैं। ये अधेड़ अवस्था के गोरे हैं जाड़े के सूट में, बाये हाथ में एक चमड़े की अटेची लटक रही है।)

मि० गाँधी—आइये मि० लैटन (दोनों हाथ मिलाते हैं। कप्तान भी उठ खड़ा होता है और मि० लैटन से हाथ मिलाता है। मि० गांधी, मि० लैटन को खाली कुर्सी पर बैठने का इशारा करते हैं।)

मि० लैटन—(बैठते हुए) क्षमा कीजियेगा, मैंने दोनों आदमियों की बातचीत में बाधा पहुंचाई है।

कप्तान—कोई बात नहीं, आपसे मिलकर बड़ी खुशी हुई।

मि० गाँधी—कहिए, शहर के क्या हाल हैं ?

मि० लैटन—अच्छा है, आप ही की चर्चा घर-घर में हो रही है।

कप्तान—वह क्या ?

मि० लैटन—यही कि मि० गाँधी केप-कोलोनी को भारतीयों से भर देना चाहते हैं, इसीलिये भारत से दो जहाज आदमी भर के लाये हैं।

मि० गाँधी—(आश्चर्य के साथ) अच्छा! (उत्सुकता से) और कोई खबर ?

मि० लैटन—और यह कहा जाता है कि भारत में आपने नेटाल के गोरों की जी भरकर निन्दा की है।

कप्तान—लोगों का रंग कैसा है ?

मि० लैटन—कैसा बताया जाय! कुछ लोग तो क्रोध के मारे ऐसे पागल हो रहे हैं कि पाजायें तो मि० गाँधी को जिन्दा चबा जायँ।

(कप्तान स्तम्भित हो जाता है, मि० गांधी के होठों पर हल्की मुस्कान नृत्य करती है।)

कप्तान—फिर मि० गांधी को कैसे उतारा जाय ?

मि० लैटन—मि० गांधी के परिवार को तो अभी गाड़ी पर बिठाकर रुस्तम जी सेठ के घर भेज दिया जाय क्योंकि गोरे उन पर हाथ न उठायेंगे। हां, मि०

गाँधी अपने विषय में जैसा उचित समझें करें।

कप्तान—मि० गाँधी के लिये क्या आपने कोई और उपाय सोच रखा है? यदि मि० गाँधी भी परिवार के साथ चले जायं तो कैसा हो?

मि० लैटन—मि० गाँधी का परिवार के साथ जाना मेरी समझ में ठीक नहीं। उनके साथ जाने से परिवार पर भी संकट आने की सम्भावना है। दूसरे, खैर वह तो मेरी निजी राय है। मैं मि० गाँधी को उसके लिये बाध्य नहीं कर सकता।

(मि० गाधी अभी तक दोनों की बातें चुपचाप सुनते थे। अब उन्होंने मौन भंग किया।)

मि० गाँधी—आपकी निजी राय क्या है, मि० लैटन?

मि० लैटन—क्या बताऊँ? मेरी समझ में तो आपका छिपकर चुपके चुपके जाना कुछ ठीक नहीं जँचता।

कप्तान—वजह?

मि० लैटन—सब लोग समझेंगे कि मि० गाँधी डर गये और न जाने कितने नये नये नाम इनके लिये गढ़ेंगे। इससे भारतीयों की भी प्रतिष्ठा में धक्का

लगेगा, और सबसे बड़ी बात तो यह है कि इस समय हल्ला-गुल्ला ठंढा पड़ गया है, गोरे लोग चले गये हैं, अगर मि० गाँधी हिम्मत से काम लें तो कोई उनका बाल भी बांका न कर सकेगा।

मि० गाँधी—मि० लैटन, आप मेरे मन की बात कह रहे हैं। इस समय हमें आपकी सबसे बड़ी आवश्यकता थी। लुक-छिपकर जाना हमको भी बड़ी लज्जास्पद चीज मालूम होती है और इस भय के अर्थ तो होते हैं भगवान की सत्ता में अविश्वास। जब तक वह रक्षक है कोई कैसे मार सकता है? और छिपकर जाने से तो लोगों की जो बुरी धारणा मेरे विषय में बन गई है उसकी पुष्टि हो जायगी। इसलिये मैं तो खुले आम जाऊँगा। हां, परिवार को गाड़ी पर भेज दिया जाये।

कप्तान—मि० गाँधी, आप अच्छी तरह से समझ-बूझ लीजिये।

मि० गाँधी—अब इसमें समझने-बूझने की तो कोई गुंजायश नहीं मालूम होती। यह मेरा अन्तिम निर्णय है।

मि० लैटन—मि० गाँधी, आप मेरे कहने में

आकर जोश में कोई ऐसा काम न कर वैठिये जिसके लिये वाद को पछताना पड़े।

मि० गाँधी—नहीं, इससे आप निशाखातिर रखें। मैं सब कुछ अपनी जिम्मेदारी पर कर रहा हूं और उसका मुझे पूरा ज्ञान है।

कप्तान—फिर मेरी जिम्मेदारी का क्या होगा?

मि० लैटन—मैं जहाज़ के एजेण्ट के वकील की हैसियत से आपको जो हिदायत दी गई है उस जिम्मेदारी से बरी करता हूं और अपनी जिम्मेदारी पर मि० गाँधी को ले जा रहा हूं।

कप्तान—धन्यवाद। हां, तो अब क्या करना चाहिए?

मि० लैटन—चलिये हम और आप पहले मि० गाँधी के परिवार को गाड़ी पर भेज दें, फिर देखा जायगा।

(मि० लैटन और कप्तान बाहर जाते हैं। मि० गाधी उठकर टहलने लगते हैं चिन्तित भाव से।)

मि० गाँधी—(कुछ मन ही मन बड़बड़ाते हुए से) समुद्र में एक भयंकर तूफ़ान का सामना तो किया पर सच्चा तूफ़ान अभी सामने है। (अदृष्ट की ओर देखकर

ज़रा सा सिर उठाकर हाथ जोड़े हुए) हे दीन-बन्धु ! दीन-रक्षक ! अपने बच्चों की रक्षा करो। तुम्हारे सिवा इनका और कौन साथी है ? इन्हें सुरक्षित अवस्था में सेठ जी के घर तक पहुंचा दो। प्रभो, मैं भी तुम्हारा ही हूं, हमें चाहे कष्ट कितना ही दो, पर कष्ट सहने की शक्ति अवश्य दो। आज तुम्हारे भरोसे इस उमड़ते समुद्र की लहरों में कूदने जा रहा हूं।

(इतने मे मि० लैटन और कप्तान आजाते हैं)

मि० गाँधी—सबको भेजकर, मि० लैटन ?

मि० लैटन—हां भेज दिया। उनके साथ एक आदमी भी कर दिया है। अब आप उनकी ओर से निश्चिन्त हो जाइये।

कप्तान—यदि आप भी चले गये होते तो बड़ा अच्छा रहता। एक सुन्दर मौका हाथ से निकल गया।

मि० गांधी—हमें प्राणों का भय नहीं है। कप्तान, हमारी क्षणिक दुर्बलता पर हमें लज्जित न करो।

कप्तान—नहीं मि० गाँधी, मेरा मतलब यह बिल्कुल न था।

मि० लैटन—मि० गाँधी, अब हम लोगों को भी चलना चाहिये।

मि० गाँधी—मि० लैटन, आपका मेरे साथ जाना ठीक नहीं है। क्या पता रास्ते में क्या गुज़रे? मैं आपको अपने लिये ख़तरे में नहीं डालना चाहता।

मि० लैटन—पर मैं तो आपको ख़तरे में डालकर पीछे नहीं रहना चाहता। मैं आपके साथ अवश्य चलूंगा। अब जल्दी भी करनी चाहिए।

मि० गाँधी—अच्छी बात है, जैसी आपकी इच्छा। (कप्तान की ओर हाथ बढ़ा कर मिलाते हुए) कप्तान, मैं तुम्हारी सेवा और सज्जनता को भूल नहीं सकता।

कप्तान—धन्यवाद, आपका मार्ग निरापद हो। (मि० लैटन से हाथ मिलाते हुए) आपका भी मार्ग बाधारहित हो।

(मि० लैटन और मि० गांधी चल पड़ते हैं। वे ज्यों ही एक ओर से परदे की ओट में जाते हैं, दूसरी ओर से सात गोरे बालक खाकी हाफ़पैन्ट, हाफशर्ट, काले मौज़े और काले बूट पहने हुए आते हैं; हैट सबके सिर पर ख़ाकी रंग का है। सब गाते हैं, परदे से ही आवाज आती है:—

हम लेंगे हाँ, जी गाँधी को हम लेंगे,
उस इमली के बड़े पेड़ पर, फांसी हम दे देंगे।

(आवाज़ तेज़ होती जाती है)

कप्तान—(कुछ चिन्तित सा) अरे, क्या ये लोग

छिपे हुए थे। मि० गाँधी की रक्षा करो, हे भगवान !

(कप्तान एक ओर से परदे के पीछे धीरे धीरे जाता है, गोरे बालक दूसरी ओर से आगे बढ़ते आते हैं। गाना जारी है।)

एक बालक—(रुक कर, गाना रुक जाता है) क्यों भई, गाँधी ने कलकत्ता में क्या कहा था ?

दूसरा बालक—कलकत्ता में कहा था कि गोरे लोग हिन्दुस्तानियों को दिन दहाड़े लूट लेते हैं। सब गोरे लुटेरे हैं।

तीसरा बालक—तो आज देखें हम लोग कैसे लुटेरे हैं।

पहला बालक—और बम्बई में क्या खबर उड़ाई थी ?

दूसरा बालक—बम्बई में तो वे सिर-पैर की हाँकी थी; वहां कहा था कि गोरे लोग जहां कहीं हिन्दुस्तानियों को पाते हैं मारते हैं और बेइज्जत करते हैं।

तीसरा बालक—और क्या ? ठीक ही तो है, देखे हम लोग कैसे मारते और बेइज्जत करते हैं। आज मज़ा चखा देना है, क्या समझेंगे गोरे कैसे होते हैं।

पहला बालक—क्यों आज नो उतरेगा ? उसके

घरवालों की गाड़ी अभी गई है, वह भी कुछ ठहर कर आता ही होगा।

दूसरा बालक—और क्या, तब तक स्वागत के लिये कुछ फल-फूल तो बटोर लेना चाहिए।

तीसरा बालक—मैं तो थोड़े से अंडे अभी लाता हूं। (अन्दर जाकर कुछ सुफेद गोलिया लाता है और रखता है।)

अन्य बालक—हम भी थोड़े से ईंट-पत्थर रख लें (सब इधर-उधर से इकट्ठा करते हैं।)

पहला बालक—हां, जी वह गीत कैसे है (सभी गाते हैं:—

हम लेंगे, हम लेंगे

गाँधी को हम लेंगे, हां जी गाँधी को हम लेंगे।
उस इमली के बड़े पेड़ पर फांसी हम दे देंगे॥

(एक ओर से मि० गांधी और मि० लैटन आते दिखाई देते हैं। अभी स्टेज पर नहीं आपाये, आरचेस्ट्रा से गम्भीर स्थिति के द्योतक बाजे का हल्का बैकग्राउंड है।)

प्रथम बालक—वह देखो यार, दो आदमी तो आरहे हैं, जहाज़ की ओर से। एक वही तो नहीं है?

दूसरा बालक—ए, वही तो जान पड़ता है, (ज़रा

ग़ौर से देखकर) वही है वही, और वह दूसरा कौन है, हाथ में चमड़े की अटैची लिये ?

तीसरा बालक—वह तो एजेण्ट के वकील जान पड़ते हैं।

दूसरा बालक—वकील ? क्या नाम है इनका ?

प्रथम बालक—अरे मि० लैटन यही हैं क्या ?

तीसरा बालक—और क्या ?

प्रथम बालक—ये तो सुना है गाँधी के बड़े पक्के दोस्त हैं।

दूसरा बालक—तभी तो रक्षक बने आ रहे हैं।

तीसरा बालक—इनको किसी तरह अलग करना चाहिए।

प्रथम बालक—अच्छा देखो, जब दोनों आगे आगे चलें तो तुम लोग पीछे-पीछे 'गाँधी को मारो, गाँधी को मारो' चिल्लाना शुरू करना, तब तक मैं लपक कर मि० लैटन की अटैची छीन लूंगा। जब वे पीछे मुड़कर देखने लगें तो तुम लोग गाँधी और मि० लैटन के बीच में पिल पड़ना और मारना आरम्भ कर देना। क्यों यह स्कीम कैसी रहेगी ?

सभी—(एक साथ) ठीक है।

प्रथम बालक—अच्छा सब सचेत हो जाओ, वह आगये दोनों।

(मि० गांधी और मि० लैटन दोनों का प्रवेश। मि० गांधी के चेहरे पर शहीदाना मुस्कराहट है। मि० लैटन चकित और चिन्तित नजर आते हैं)

•मि० लैटन—मि० गाँधी, ये शैतान कहां से पहुंच गये?

मि० गाँधी—इनके न पहुंचने में ही आश्चर्य हो सकता था। पहुचना तो स्वाभाविक ही है।

मि० लैटन—फिर क्या करना चाहिए? (अस्त व्यस्त से) आइये लौट पड़ें, जल्दी कीजिये।

मि० गांधी—अब मैं नहीं लौट सकता।

मि० लैटन—तो क्या प्राण दीजियेगा?

(भीड निकट आती जा रही है "गांधी को मारो, गांधी को मारा" की आवाज भीषणतर होती जाती है।)

मि० गाँधी—यह तो भगवान जाने।

[इतने मे एक बालक मि० लैटन की अटैची झपाटे के साथ छीन कर भागता है। वे मुड़कर पीछे देखते हैं। इसी बीच और लड़के धक्का करके मि० लैटन के आगे निकल जाते हैं। मि० गाधी बढते ही जाते हैं। उन पर ईंट, पत्थर और अण्डे बरसने शुरु हो जाते हैं। मि० लैटन बचाने

मि० गाँधी—(खून भरा सिर उठाकर) कौन······ मिसेज़ अलेग्ज़ैण्डर···!

मिसेज अ०—हां, मैं हूं। कैसी तबीयत है ?

मि० गाँधी—चोट···तो···अधिक···लगी है···।

मि० अलेग्ज़ैण्डर—अब आप निश्चिन्त रहिये। मेरे रहते अब आपका बाल भी बांका न हो सकेगा।

(स्टेचर आजाता है। सिपाही मि० गाधी को उठाकर आहिस्ते से स्टेचर पर रखते हैं।)

मि० अलेग्ज़ैण्डर—तुम लोग थाने पर चलो। प्रिये, तुम भी साथ जाओ। वहां डा० विलियम को बुलाकर मि० गाँधी की मरहम-पट्टी कराओ, तब तक मै आता हूं।

(एस० पी० को छोड़कर शेष सभी जाते हैं)

मि० अलेग्ज़ैण्डर—(जरा टहलते हुए) मि० गाँधी बेचारा निर्दोष है। उसे बेकार पीटा गया, क्या बताऊँ यदि कहीं मैं इन दगाइयों को सज़ा दिला पाता ! मि० गाँधी का अभी तो बुरा हाल जान पड़ता है।

(मि० एसकम्ब का प्रवेश, पैतालीस वर्ष के गोरे जवान, गरम सूट पहने हुए, मुँह में सिगार दबाये हैं।)

मि० अलेग्ज़ैण्डर—आइये मि० एसकम्ब, कहां

तक जाने का इरादा है ?

मि० एसकम्ब—कुछ नहीं, जरा मि० गाँधी से मिलने का इरादा है।

मि० अलेग्ज़ैण्डर—क्यों, बात क्या है ?

मि० एसकम्ब—सुना है कि मि० गाँधी को कुछ लोगों ने पीट दिया है। मैंने तो मना करा दिया था कि दिन को न उतरें, पर वे क्यों मानने लगे हमारी वात। हमें तो पहले से ही इस घटना की आशंका थी। ख़ैर, कहां हैं वे ?

मि० अलेग्ज़ैण्डर—थाने पर हैं। चलिये हम भी चलें।

(दोनों एक ओर से जाते हैं। दूसरी ओर से मि० गांधी को एक पहियेदार स्टेचर पर एक नौकर लाता है। साथ मे मिसेज अलेग्ज़ैण्डर भी हैं।)

मि० गाँधी—(सिर पर पट्टी बंधी है, पडे पडे) मिसेज़ अलेग्ज़ैण्डर, मैं आपका कितना शुक्रगुज़ार हूं! कैसे बताऊँ ?

मिसेज़ अ०—इसकी तो कोई आवश्यकता नहीं। हां, आपके दर्द का क्या हाल है ?

मि० गाँधी—अब तो बहुत कम है; पसलियां

थोड़ी सी टूट गई हैं और घुटनों में कुछ सख्त चोट आगई है।

मिसेज़ अ०—आप बिल्कुल चिन्ता न करें। आप जब तक अच्छे न हो जायं यहीं रहिए। अभी गोरों का मन शान्त नहीं हुआ है। मैं जी-जान से आपकी सेवा करूँगी।

मि० गाँधी—धन्यवाद।

(इतने में मि० अलेग्ज़ैंडर और मि० एसकम्ब आजाते हैं)

मि० अलेग्ज़ैण्डर—मि० गाँधी, ये देखिये, मि० एसकम्ब आपसे मिलने आये हैं।

मि० एसकम्ब—कहिए मि० गाँधी, क्या हाल है?

मि० गाँधी—अच्छा हूं। चोट एक-दो जगह जरा सख्त लगी है।

मि० अलेग्ज़ैंडर—अच्छा, आप लोग बातें कीजिये तब तक मैं कुछ और काम करूं। (मि० अलेग्ज़ैंडर मिसेज़ अलेग्ज़ैण्डर को भी इशारा करते हैं चलने का। दोनों चले जाते हैं।)

मि० एसकम्ब—मुझे तो आपके इस तरह पिटने पर बड़ा ही दुख हुआ। मेरा सन्देशा तो आपको मिल ही गया होगा?

मि० गाँधी—हां मिल तो गया था। मुझे दुःख है कि आपके आदेशों का मैं पालन न कर सका।

मि० एसकम्ब—खैर, कोई बात नहीं। हमें जो कुछ ठीक जंचा हमने आपको कहला दिया। उसे मानने न मानने का अधिकार आपको था, और इस मामले में आप पूरे स्वतन्त्र थे। हां, इतना मैं जरूर कहूंगा कि यदि आप मेरी राय मान लिये होते तो यह दुर्गति न होती।

मि० गाँधी—पर मेरा लुक-छिपकर आना तो और भी बुरा था। सभी गोरे समझते कि मैंने भारत में सचमुच उनके खिलाफ़ प्रोपेगैन्डा किया है। इसी से मैं डरता हूं।

मि० एसकम्ब—खैर, इस अत्याचार से मेरे दिल को जो दुख पहुंचा है उसे मैं ही जानता हूं। समाचार मिलते ही मैंने उपनिवेश-सचिव मि० चैम्बरलेन को 'केबल' भेजा। उन्होंने तुरन्त जवाब दिया कि अत्याचारियों पर मुकदमा चलाया जाय और उन्हें सजा दिलाई जाय ताकि वे ऐसी कार्रवाई फिर आगे न कर सकें। अगर आप अभियुक्तों को पहचान सकें तो मैं सरकारी वकील की हैसियत से उन पर अभी

मुकदमा दायर करूँगा।

मि० गाँधी—नालिश तो मैं किसी पर करना ही नहीं चाहता। (मि० एसकम्ब आश्चर्य भरी दृष्टि से मि० गाधी का मुंह देखते हैं) मैं जानता हूं कि इस मामले में उन गोरों का बिल्कुल दोष नहीं है जिन्होंने हमें पीटा है। उन बिचारों से तो कहा गया था कि मैंने भारत में नेटाल के गोरों की कड़ी निन्दा की है और उनके मुकाबले के लिये दो जहाज़ में भारतीयों को भर कर लाया हूं। ऐसी दशा में यदि वे हमें जान से मारने पर उतारू हो जायं तो उनका क्या दोष? दोष तो उन लोगों का है जिन्होंने ये खबरें जानबूझकर फैलाईं। बशर्ते आप बुरा न माने तो मैं कहूंगा कि दोष आपका है। (मि० एसकम्ब और भी चकित होकर मि० गाधी की ओर देखते हैं) क्योंकि आपने भी 'रूटर' की ख़बरों पर विश्वास कर झूठी अफवाहों को फैलने में मदद दी। यदि आप चाहते तो अनायास लोगों को ठीक रास्ते पर ला सकते थे, पर हमें इससे क्या। दोष चाहे किसी का हो हमें तो नालिश ही नहीं करनी है। बदले की लेश-मात्र भी भावना मेरे हृदय में नहीं। गोरों ने भूल की है और समझ में आजाने पर वे स्वयं

पछतायेंगे।

मि० एसकम्ब—(श्रद्धा की दृष्टि से मि० गाँधी को देखते हैं मानो मिस मरियम के पुत्र को देख रहे हो।) मि० गाँधी, आपके इस निश्चय से मैं बहुत प्रसन्न हूं। इससे हमें लोगों को शान्त करने में बड़ी मदद मिलेगी। स्थिति आसानी से काबू में आजायेगी और आपकी भी प्रतिष्ठा बढ़ेगी; पर कोई जल्दी नहीं, आप अपने अन्य मित्रों से सलाह ले लीजिये, फिर लिखकर दे दीजियेगा तो मैं मि० चैम्बरलेन को भी खबर भेज दूंगा।

मि० गांधी—इस मामले में हमें किसी से सलाह नहीं लेनी है। यह हमारा अन्तिम निर्णय है। मैं किसी पर नालिश नहीं करूंगा और यह बात मैं अभी लिखकर आपको दिये देता हूं।

(मि० गाँधी बगल मे रखी मेज़ पर पड़े क़लम को उठाकर एक पैड उठाने का उपक्रम करते हैं।)

मि० एसकम्ब—मि० गाँधी आप आदमी नहीं, देवता हैं।

(परदा गिरता है)

पुण्य-स्मृति

पुण्य-स्मृति

[मि० गाधी के बगले का एक कमरा जिसमें उनके क्लर्क मि० विलियम रहते हैं। कमरे के बीच में एक टी-टेबिल रखी है। टेबिल के दोनो ओर आमने-सामने बेत की दो बाहदार कुर्सिया रखी हैं। एक पर मि० विलियम बैठे हैं, दूसरी पर मिसेज विलियम। मि० विलियम के सामने दीवार पर ईसा मसीह की दो तसवीरे शीशे में जडी हुई लटक रही हैं। एक में क्रास पर ईसा को फासी होने का दृश्य है। दोनो कलाइयों में, दोनों पिडलियों में और गले मे कीलें ठोक दी गई हैं। इन जगहों से रक्त की धारा बह रही है। महात्मा ईसा की मुद्रा शान्त और मौन है। दूसरे चित्र में महात्मा ईसा एक बाज़ के बच्चे को छाती से लगाये हैं और उसको एकटक देख रहे हैं। उनकी आखों से स्नेह टपक रहा है। बाज की आखों में हिसा भरी है। हिसा को प्रेम से जीतने की चेष्टा हो रही है। तसवीरो के नीचे एक बड़ा आइना दीवार में जड़ा है। बगल की दीवार पर मि० गाधी की तसवीर लटकती है। सूट, टाई में जैसे पूरे बैरिस्टर बने हुए। मि० विलियम के पीछे वाली दीवार पर मि० और मिसेज़ विलियम के चित्र हैं, विवाह के समय के। मिसेज़ विलियम इसे देखकर मन ही मन प्रसन्न हो रही हैं; यही उनकी आदत

है। फर्श पर दरी बिछी है। एक कोने में पेशाब के लिये एक चीनी का बर्तन है जिस पर एक ढक्कन भी रक्खा है। टेबिल पर एक तश्तरी में तराशे हुए टोस्ट के टुकड़े, दूसरी मे बिस्किट रखे हैं। दो प्याले चाय भी दो तश्तरियों में रखी हैं। प्याले से भाप निकल रही है। मि० विलियम का रंग गाढ़ा काला है। दाढ़ी-मूँछ बिल्कुल साफ हैं, उम्र लगभग २८ वर्ष की होगी। ड्रेस के मामले में ये जरा शौकीन हैं शायद किसी कमी को इस तरह पूरा करने की चेष्टा करते हों। दिन जाड़े के हैं इसलिये आप सर्ज का सूट पहने हैं। टाई गाढे भूरे रंग की है। फाउन्टेन पेन, रिस्टवाच और गोल्डफ्रेम के ऐनक से लैस हैं, चेहरे पर क्रीम के कुछ कण उड़ते से नज़र आते हैं। कोट की ऊपरी जेब से रेशमी रूमाल ज़रा ज़रा सा झाकने की कोशिश करता है। मिसेज़ विलियम २२ वर्ष की ज़रा मोटी और क़द मे छोटी स्त्री हैं। आपका रंग सांवला है, पर मि० विलियम से बहुत साफ है। आप भी पेटी-कोट, स्टाकिङ्ग, ऊची एढ़ों के जूते वगैरह से खूब सुसज्जित हैं। चेहरे पर कोई बाजारू पराग सा उड़ता दिखाई देता है। आपके शरीर से खुशबू निकल रही है। आप 'सेन्टस' की खास तौर पर शौकीन हैं।]

मिसेज़ विलियम—(टोस्ट का एक टुकड़ा उठाते हुए) आज तो बड़ी ठंढक है।

मि० विलियम—हां, प्रिये, आज कुहरा भी और दिनों से कुछ ज्यादा दिखाई दे रहा है।

मिसेज वि०—(चाय का प्याला होठों के पास ले जाकर लौटाती हुई) चाय अभी बहुत गरम है।

मि० विलियम—(जरा मुस्कराते हुए) तुम्हारे होंठ भी तो बड़े नाज़ुक हैं, कहीं झुलस जायें तो! (प्याला उठाकर जरा सी चाय पीता है) देखो, मेरे होंठ तो नहीं जलते।

मिसेज़ वि०—अरे भाई, तुम बहादुर हो। (एक बिस्किट उठाते हुए) भला मैं तुमसे कैसे जीत सकती हूं?

मि० विलियम—(टोस्ट का एक टुकड़ा लेकर) अब तुम्हें बनाने की सूझी।

मिसेज़ वि०—(चाय की प्याली उठाते हुए) पहले किसने शुरू किया?

मि० विलियम—(एक बिस्किट लेते हुए) क्या इसमें भी शक है?

मिसेज़ वि०—(प्याली रखते हुए) ज़रा सुनूं भी।

मि० विलियम—तुम्हारे सिवा और कौन हो सकता है?

मिसेज़ वि०—अच्छा! मैं तो पहले ही समझ गई थी कि तुम मेरे सिर मढ़ोगे।

मि० विलियम—अच्छा, सुनो एक बात पूछूं?

ठीक ठीक बताओगी ?

मिसेज़ वि०—इसके लिये मेरी इजाज़त की क्या ज़रूरत थी ?

मि० विलियम—क्या पता उसे भी हंसी-मज़ाक में उड़ा दो।

मिसेज़ वि०—मज़ाक में उड़ाने की बात होगी तो उड़ाई ही जायगी। इसका ठेका कौन पहले से ले सकता है।

मि० विलियम—(टोस्ट का एक टुकड़ा उठाते हुए) तो फिर न पूछने में ही खैरियत है।

मिसेज़ वि०—क्यों, पूछोगे क्यों नहीं ? मेरा मतलब यह थोड़े ही है कि तुम कुछ भी पूछो ही नहीं।

मि० विलियम—नहीं भाई, तुम्हारा क्या ठीक, फिर बनाना शुरू करोगी।

मिसेज़ वि०—(एक बिस्किट उठाते हुए) अरे भाई, तुम तो बने बनाये भगवान के घर से आये हो, तभी तो मैंने तुमको पसन्द किया। अब भला तुम्हें मैं क्या बना सकती हूं ?

मि० विलियम—यह अभी से छींटाकसी चलने लगी।

मिसेज़ वि०—तुम ऐसी बात ही कहते हो, फिर मौक़ा पाकर कोई क्यों चूकने लगा ?

मि० विलियम—तभी तो सोचता हूं कि कुछ न कहना ही अच्छा है।

मिसेज़ वि०—(ज़रा सी चाय पीते हुए) तो कहो फिर हँसना-बोलना भी बन्द कर दूं।

मि० विलियम—यह कौन कहता है ?

मिसेज़ वि०—तुम और कौन ? (कुछ रुष्ट होकर) तुम्हारे साथ ज़रा सा हंसना भी पाप है।

मि० विलियम—(ज़रा सी चाय पीते हुए) रुष्ट होना भी कभी कभी कितना सुन्दर लगता है।

मिसेज़ वि०—अच्छा रहने दो (ज़रा सा मुस्कराते हुए) जाओ, मैं चाय नहीं पीती।

मि० विलियम—बहुत अच्छा सरकार (हाथ बढ़ा कर मिसेज़ विलियम के चाय का प्याला अपनी ओर उठा कर रखते हुए) लाइये, मैं पी लूं।

मिसेज़ वि०—(मि० विलियम की तरफ़ से चाय का प्याला जल्दी से खींचते हुए) और क्या आप बड़े खूबसूरत हैं न! (चाय पीने लगती है। दोनो मुस्कराते हैं।)

मि० विलियम—यह तो अपने दिल से पूछो।

मिसेज़ वि०—वह तो मेरे पास है ही नहीं, पूछूं किससे? (चेहरे पर शरारत नाट्य करती है।)

मि० विलियम—(मुस्कराते हुए) किसी और को दे दिया क्या?

मिसेज़ वि०—क्यों नहीं, जब तक दिल लेने वाले दुनिया में मौजूद हैं भला देने वालों की क्या कमी हो सकती है?

मि० विलियम—कौन ऐसा खुश किस्मत है भई, जरा मैं भी सुनूं।

मिसेज़ वि०—चलिये इतने सस्ते में दिलदार का नाम नहीं बताती।

मि० विलियम—तो क्या कीमत लोगी?

मिसेज़ वि०—कीमत? बता दूं?

मि० विलियम—बता दो।

मिसेज़ वि०—दोगे न?

मि० विलियम—ज़रूर।

मिसेज़ वि०—बाद को मुकर तो न जाओगे।

मि० विलियम—हरगिज़ नहीं। (उत्सुकता से मिसेज विलियम का मुँह ताकता है।)

मिसेज़ वि०—अच्छा तो तुम जो बात कहने वाले थे उसे कहो।

मि० विलियम—बस, इतना ही ?

मिसेज़ वि०—मेरे लिये यही बहुत है। क्या पता कौन सी बात है ? बिना जाने उसकी कीमत का मैं क्या अन्दाज लगा सकती हूं।

मि० विलियम—मैं मि० गाँधी के विषय में तुमसे कुछ पूछना चाहता था।

मिसेज़ वि०—(टोस्ट का एक टुकड़ा लेकर) क्या मतलब ?

मि० विलियम—यही कि वह किस तरह के आदमी जान पड़ते हैं।

मिसेज़ वि०—क्यों ? हमें तो बहुत भले लगते हैं। अवस्था तो अभी कम है पर समझदारी बड़े बड़े आदमियों को मात करती है।

मि० विलियम—(टोस्ट का एक टुकड़ा लेकर) यह कैसे जाना तुमने ?

मिसेज़ वि०—कल उन्होंने हमको बुलाया था।

मि० विलियम—(चकित होकर मिसेज विलियम की ओर देखते हैं।) अच्छा ! किस लिये ?

मिसेज़ वि०—कुछ नहीं, यही पूछ रहे थे कि तुम्हें इस घर में कोई कष्ट तो नहीं है। फिर कहने लगे कि तुम इस घर को अपना घर समझना। मैं तुम्हारा बड़ा भाई हूं और बहू जी की ओर इशारा करके बोले कि लो तुम्हें एक भाभी भी देता हूं। बेचारी बहू जी शरमा रही थीं। उन्होंने कहा कि किसी भी तरह की तकलीफ़ हो तो हमसे तुरन्त कहना। फिर और भी बहुत सी बातें घर की व्यवस्था के बारे में करते रहे।

मि० विलियम—सचमुच ऐसा आदमी मिलना मुश्किल है। हमसे जब 'इन्टरव्यू' हो रही थी तभी उन्होंने कह दिया था कि मैं स्वयं सब का सेवक हूं। मेरा सेवक कोई नहीं। आप मेरे छोटे भाई की तरह रहियेगा और मैं तो आपको यही समझूंगा। घर आपका है, किसी तरह का सँकोच न कीजियेगा।

मिसेज़ वि०—बिल्कुल साधू हैं; इतना पढ़े-लिखे, विलायत से बैरिस्टरी पास की, इतनी अच्छी प्रैक्टिस है, भारतीयों के सब से बड़े नेता हैं, पर अभिमान तो कहीं छू तक नहीं गया है। भला दुनिया में ऐसे कितने आदमी मिलेंगे।

मि० विलियम—मेरी समझ में तो शायद इनके

अलावा दूसरा न मिले। देखो न, अभी सिर्फ दो दिन हुए हैं इस घर में आये हुए और ऐसा जान पड़ता है जैसे अपना घर हो।

मिसेज़ वि०—एक नौकर भी है तो वह जान पड़ता है कोई उनका रिश्तेदार हो।

मि० विलियम—वह किसी को भी, मानते ही ऐसे हैं। वह तो कहते हैं कि 'वसुधैवकुटुम्बकम्' यानी सारी दुनिया अपना परिवार है।

मिसेज़ वि०—और वैसे ही चलते भी हैं।

मि० विलियम—अरे, 'चर्च' भी तो चलना है। आज 'सण्डे' है। (हाथ की घड़ी देखकर) देखो सवा आठ बज गये। हम लोगों को साढ़े आठ तक पहुँच जाना चाहिये।

मिसेज़ वि०—चलो चलें और करना ही क्या है।

मि० विलियम—(प्याली की बची चाय मुंह के पास लेजाकर) यह तो अब बिल्कुल ठंढी होगई।

मिसेज़ वि०—छोड़ दो, न पियो। ठंढी चाय नुकसान करती है।

मि० विलियम—(चाय का प्याला छोडकर उठता हुआ) पता नहीं इसे (पेशाब वाले चीनी के बर्तन की ओर

इशारा करते हुए) उठाने और फेंकने का क्या प्रबन्ध है ?

मिसेज़ वि०—क्या पता, वही नौकर फेंकता होगा।

मि० विलियम—तुम ठीक ठीक जानती हो ?

मिसेज़ वि०—नहीं भाई, मैं अन्दाज़ की बात कह रही हूं।

मि० विलियम—मुझे तो सन्देह होता है कि कहीं मि० गाँधी खुद न उठाते हों, या बहू जी उठाती हों, क्योंकि नौकर से उठाने के लिये वे कभी नहीं कह सकते।

मिसेज़ वि०—तो इस समय तो कुछ भी नहीं हो सकता। चर्च का समय हो गया है। लौटकर देखा जायगा। बिना जाने-बूझे उठाकर फेंकने लगना भी तो ठीक नहीं है।

मि० विलियम—(ज़रा देर चुप रहकर, जैसे कुछ सोच रहा हो) अच्छी बात है, चलो। (ज़रा सा चलकर) हां, एक बात याद आगई।

मिसेज़ वि०—(कुछ उत्सुकता से) वह क्या ?

मि० विलियम—(मुस्कराता हुआ) वही, तुम्हारे दिलदार साहब की सूरत। उन्हें तो चर्च में दिखाओगी, क्योंकि वे वहां अवश्य ही आने वाले होंगे।

मिसेज़ वि०—(मुस्कराती हुई) चर्च क्यों, अभी दिखा सकती हूं।

मि० विलियम—कोई फोटो रक्खी है क्या?

(मिसेज विलियम की ओर बढ़ते हुए)

मिसेज़ वि०—हां, और क्या?

मि० वि० (उत्सुकता से) कहां है? ज़रा देखूं।

मिसेज़ वि०—(गम्भीर होकर) आओ दिखाऊं। (मि० विलियम मिसेज़ विलियम के पास आकर खड़े हो जाते हैं। मिसेज विलियम उनका हाथ अपने हाथ मे लेकर दीवार में लगे बड़े आइने के पास ले जाती है) यह देखो ये हैं मेरे दिलदार साहब।

(दोनों खिलखिलाकर हंस पड़ते हैं और चल देते हैं चर्च के लिये, एक ओर से। उसी समय दूसरी ओर से कस्तूर बा का प्रवेश होता है। २६ वर्ष की युवती काले किनारे की सफेद साड़ी, काले रंग के चेक डिज़ाइन का जम्पर और पावों में चप्पल हैं। सिर ढका है पर घूंघट नहीं है, लाल सिंदूर की रेखा सिर के बीच में साफ़ साफ़ चमकती है, रंग हलका सावला है। कलाइयों में दो दो सुनहरे रंग की चूड़ियां हैं।)

कस्तूर बा—(कमरे में इधर-उधर देख रही हैं। एकाएक चीनी के बर्तन पर निगाह अड़ जाती है। गौर से ज़रा देर तक ताकती रहती हैं। फिर उदास होकर एक कुर्सी पर बैठ जाती हैं और हाथों पर ठोड़ी को रोककर

कुछ सोचती हैं। फिर स्वयं भुनभुनाती हुई बोलती हैं) आज ऐसा दिन आगया कि अन्त्यज का भी मल-मूत्र उठाना पड़ेगा। अजीब सनक है। जो कुछ कहो तो स्वयं उठाने पर उतारू हो जाते हैं......उनका उठाना तो और भी देखा नहीं जाता......(फिर कुछ देर एकटक बर्तन की ओर देखती हैं)......एक बैरिस्टर की स्त्री मेहतर का काम करे, भला यह कौन कर सकता है... और आज की बात तो और भी निराली है। आज मेहतर का मेहतर बनना है; ऐसे गड्ढे में गिरना है जहां से निकलना तो दूर रहा उठना तक सम्भव नहीं। कहां हम वैष्णव! और कहां यह रौरव नरक। (फिर कुछ देर तक सोचती हैं। जान पड़ता है कि दृष्टि अदृष्ट पर रुकी हुई है)......इस घर में मैंने क्या क्या नहीं किया। लूले, लंगड़े, कोढ़ी तक की सेवा की। हिन्दू, तुरुक, ईसाई, बाम्हन, क्षत्रिय, डोम, चमार, मेहतर किसको नहीं बनाकर खिलाया। साथ रक्खा और इतना ही क्यों, उनकी छोटी से छोटी सेवा की। मल-मूत्र उठाने के लिये तो जान पड़ता है मेरा जन्म ही हुआ है। पर आज न जाने क्यों मेरा वैष्णव मन विद्रोह कर रहा है।......(जरा जोर से)

एक बैरिस्टर की पत्नी की यह दुर्गति !······आज तो मैं न उठाऊंगी चाहे जो भी हो।

(इतने में मि० गांधी आजाते हैं। काले पैंट पर पूरी बांह की सुफेद कमीज़ पहने हुए, पावों में काले मोज़े और काले जूते हैं। बाल कुछ बिखरे से हैं, जान पड़ता है अभी स्नान नहीं किया है। कान के पास साबुन की ज़रा सी फेन लगी है, अभी अभी 'शेव' कर रहे थे। शायद कस्तूर बा की बातें सुनकर निकल पड़े। अभी मूंछों की कतर-ब्योंत नहीं हुई है। रंग तो सावला हई है, चेहरे से जवानी उमड़ी पड़ती है। अभी तो ३० वां वर्ष ही लगा है। आखों में तेज़ है। वे बिजली की तरह कमरे में प्रवेश करते हैं। उनको देखते ही कस्तूर बा कुर्सी से उठ खड़ी होती हैं।)

मि० गाँधी—न उठाओ, भाई, तुम्हें कौन कहता है उठाने के लिये ?

कस्तूर बा—(ज़रा गुस्से में आकर) तुम कहते हो, और कौन कहता है।

मि० गांधी—मैं नहीं कहता कि तुम दुनिया भर के मल-मूत्र उठाया करो। तुम वैष्णव हो, वैष्णव रहो, मैं शूद्र हूं शूद्र से भी नीच हूं। मैं उस बर्तन को उठाऊंगा, तुम छोड़ दो।

(मि० गांधी कोने में पड़े हुए बर्तन को उठाने के लिये

बढ़ते हैं ।)

कस्तूर बा—(आगे बढ़ते हुए) रहने दो, बड़े उठाने वाले बने हो। जाकर अपना काम करो। (बर्तन उठाती है।)

मि० गांधी—हमको यह रोना-झींकना अच्छा नहीं लगता।

कस्तूर बा—तुम्हें क्यों अच्छा लगेगा। अपने ही भरोसे तो तीस तीस आदमियों को घर में बैठाकर कोर्ट चले जाते हो। लूला, लँगड़ा, कोढ़ी, अपाहिज़ जिसे दुनिया में कहीं जगह न हो उसके लिये तुम्हारे घर का दरवाज़ा खुला है। बड़े भारी सेवक न हो? सबको खिलाते-पिलाते हो, सेवा-टहल करते हो, रोज सवेरे राम राम की बेला में सबका मल-मूत्र धोते हो।........

मि० गांधी—अच्छा, बक-बक मत करो। अगर तुम्हें रोना और सिर धुनना है तो बर्तन वहीं रख दो। मैं खुद सब कर लूंगा।

कस्तूर बा—क्यों नहीं! (आंखों से टपटप आंसू गिरते हैं, और कपोलों से लुढ़क कर अंचल को भिगो रहे हैं। दोनों हाथों से बर्तन उठा कर चलती हैं। आंखें लाल

हो आई हैं। आंसू की बूँदें देखते ही मि० गांधी का पारा चढ़ जाता है।)

मि० गांधी— कस्तूर, देखो मेरे घर में यह सब नहीं चल सकता। मेरा कोई सेवक नहीं, मैं सारे संसार का, संसार के छोटे से छोटे प्राणी का सेवक हूं। इसलिये मेरी पत्नी को भी क्षुद्र से क्षुद्र सेविका बनकर दुनिया में रहना पड़ेगा। यदि वह ऐसा नहीं कर सकती तो उसके लिये इस घर में जगह नहीं है। सेवा हंस के की जाती है, रोकर नहीं।

कस्तूर बा—तो मैं ऐसी सेविका नहीं, तुम लिये रहो अपना घर, मैं चली। (कस्तूर बा बर्तन को जमीन पर रखकर दरवाजे की ओर बढ़ती हैं। मि० गांधी का क्रोध अब आपे से बाहर हो जाता है।)

मि० गाँधी—(कस्तूर बा की बांह पकड़कर दरवाजे की ओर ढकेलते हुए) जब जाना ही है तो ज़रा तेज़ी से जाओ। इतनी देर तक रुकने की क्या जरूरत ?

(बगल में एक जगह परदे का दरवाजा सा बना है जो बन्द है। उसमें खोलने के लिये हैण्डिल लगा है। मि० गांधी हैण्डिल पकड़कर दरवाज़े के एक पाट को थोड़ा सा खोलते हैं।)

मि० गाँधी—(बाहर सड़क की ओर उंगली से इशारा करके।) वहां है तुम्हारे लिये जगह, जाओ डरबन की सड़कों पर भीख मांगो। (मि० गांधी हाथ से ज़रा सा कस्तूर बा को ठेलते हैं। कस्तूर बा की आंखों से मोती टप-टप टपकने के बदले धारा बनकर गिरने लगते हैं। वह जरा ज़ोर लगाकर दरवाज़े पर अड़ जाती हैं और क्रोध, ग्लानि, बेबसी और करुणा भरे शब्दों में बोलती हैं।)

कस्तूर बा—अरे, अब भी शरम करो। जरा सोचो तो, मैं सड़क पर भीख मांगना शुरू करूंगी तो नाक किसकी कटेगी ? नाम तो तुम्हारा ही बदनाम होगा। हमें यहां कौन जानता है ? सब कहेंगे दुनिया भर को जो अपने घर में जगह देता है उसके घर में उसकी अपनी ही स्त्री के लिये जगह नहीं। जो अपनी स्त्री को नहीं रख सकता ग़ैरों को क्या रखेगा। और मेरे मां-बाप भी तो यहां नहीं। सात समुन्दर पार इस अनजान देश में लाकर हमें घर से निकालते तुम्हें लाज नहीं लगती। मैं भला कहां जाऊंगी ?

(मि० गांधी का क्रोध पानी पानी हो जाता है। वे कुछ बोलते नहीं। कस्तूर बा का हाथ छोड़कर लौट आते हैं और कुर्सी पर बैठ जाते हैं। आंखों में आंसू नाचने लगते

हैं पर वे अभी गिरते नहीं। वे मौन होकर गम्भीर मुद्रा में बैठे हैं और एकटक महात्मा ईसा की तसवीर की ओर देख रहे हैं। तब तक कस्तूर बा बर्तन लेकर चली जाती हैं।)

मि० गाँधी—(कुर्सी से उठकर तसवीर के सामने घुटने टेककर) प्रभो, शक्ति दो। ओह कहां यह अहिंसा और कहां मेरी हिंसा !......कहां यह प्रेम और कहां मेरा क्रोध ! प्रभो, मैं स्वयं अपने कर्तव्य पर लज्जित हूं। मुझे शक्ति दो।

(अब मि० गांधी कुर्सी पर पूर्ववत् गम्भीर मुद्रा में बैठ जाते हैं। कस्तूर बा का प्रवेश।)

कस्तूर बा—कहिये, क्या सोच रहे हैं ?

मि० गाँधी—(उदास मन से) अपनी करनी पर विचार कर रहा हूं।

कस्तूर बा—इसमें विचार करने की कौन सी बात है ?

मि० गाँधी—यही कि मैं आज कितना बेक़ाबू हो गया था। मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया है कस्तूर !

कस्तूर बा—अन्याय ! इसमें अन्याय की कौन सी बात है ? पुरुष तो घर का देवता है। वह कभी प्रसन्न

होकर वरदान देता है और कभी (ज़रा सा मुस्कराती हुई) क्रोध में निकाल बाहर करता है।

मि० गाँधी—नहीं कस्तूर, स्त्री घर की देवी होती है, सहनशीलता की मूर्ति। पुरुष वह दैत्य है जो उसकी पूजा करते हुए भी कभी कभी अपने तामस का प्रदर्शन किये बिना नहीं रहता। कस्तूर, तुम देवी हो (हाथ जोड़कर) हमें क्षमा न करोगी?

कस्तूर बा—अरे, वाह, आपको यह क्या सूझी? यह नाटक करना कब से सीखा? (ज़रा मुस्कराती सी) यह दूसरा दृश्य है क्या? तब पहला तो काफ़ी सफल रहा।

मि० गांधी—देखो कस्तूर, हंसो नहीं। हमारे हृदय को अपने करतब पर बहुत ग्लानि है। हमारा मन रो रहा है। मैं भीतर ही भीतर गला जा रहा हूं। तुम देवी हो, क्षमा कर दो।

कस्तूर बा—बिना फल-फूल चढ़ाये ही? अच्छे भक्त हो।

मि० गांधी—तो फल-फूल के रूप में जो मांगो अभी दूं। या रुको न, सचमुच फूल लाने दो। तुम्हारे चरणों पर चढ़ाकर कृतार्थ हो जाऊं, दयामयी!

कस्तूर बा—नहीं, रुको, जो फल-फूल मैं मांगूंगी तुम दोगे ?

मि० गांधी—(पूर्ववत् हाथ जोड़े हुए) अवश्य ।

कस्तूर बा—सोच लो अच्छी तरह से ! फिर मुकर न जाना ।

मि० गांधी—नहीं, ऐसा कभी हो ही नहीं सकता ।

कस्तूर बा—तो इन अन्त्यज भाई-बहनों का मूत्र प्रति दिन उठाने की आज्ञा दो ।

(मि० गांधी स्तम्भित से रह जाते हैं । कस्तूर बा उनका मुंह देखने लगती है ।)

कस्तूर बा—ऐसे ही भक्त हो, देवी की पूजा देने से भी इन्कार !

मि० गांधी—(भावावेश में) कस्तूर, तुम सचमुच देवी हो । (कस्तूर को दोनों हाथों से ले लेते हैं ।)

परदा गिरता है

बा की बीमारी

दृश्य प्रथम

[डरबन में सन् १६०८ की घटना। डाक्टर के बंगले का ड्राइंग-रूम। फ़र्श पर कालीन बिछी है। एक कोने मे छोटी सी मेज़ पर झालरदार रंगोन मेज़-पोश पड़ा है। उस पर फ़ोन का चोंगा रक्खा है। दो स्प्रिंगदार आराम कुर्सियां रंगीन कपड़े से ढकी हुईं एक ओर पड़ी हैं। उनके सामने ही एक लम्बी स्प्रिंगदार कोच पड़ी हुई है। 'हार्थ' के ऊपरी स्तर पर कुछ विलायती खिलौने सजे हुए हैं। दोनों कोनों पर दो फ्लावर वेसेज़ रक्खे हैं जिनमें कई रंग के फूल सजे हुए हैं। दो बगल में और एक सामने कुल तीन दरवाज़े लगे हैं। हर दरवाज़े पर सफ़ेद पर्दे लगे हैं जिन पर हरे रंग के पत्ते और गुलाबी रंग के फूल बने हैं। एक कोने में स्टैण्ड पर एक चीनी का बर्तन (बेसिन) रक्खा है जिसमे थोड़ा सा पानी पड़ा हुआ है। पास ही एक खूंटी से एक सुफ़ेद रोंयेदार तौलिया लटक रहा है। वहीं ताक पर एक साबुन की डिबिया भी है। एक ओर दो चमकदार पालिशवाली बेंत की साधारण कुर्सियां पड़ी हैं। वहीं बग़ल में एक टी-टेबल भी सिकुड़ा पड़ा है। दीवारों पर एक ओर सुनहरे फ़्रेम के भीतर स्वर्णाक्षरों में लिखकर यह टंगा है कि 'सैक्रिफ़ाइस इज़ द ओन्ली ला अव लाइफ़' यानी त्याग ही जीवन का

एकमात्र कानून है। इस तसवीर के एक ओर महात्मा ईसा की तसवीर और दूसरी ओर मि० गांधी की तसवीर है। ये दोनों तसवीरें भी सुनहरे फ्रेम में हैं। बात यह है कि डाक्टर और उसकी पत्नी दोनों ही मि० गांधी को एक अलौकिक पुरुष समझते हैं और महात्मा ईसा के मुकाबिले इस चित्र को लगाने में इन दम्पति के मन में सामंजस्य का शायद कुछ भ्रम रहा हो। दूसरी दीवार पर तीन महान् वैज्ञानिकों के चित्र काले फ्रेम में लटक रहे हैं। इसी के सामने तीन महान डाक्टरों के चित्र भी टंगे हैं और 'मेन डोर' के ऊपर डाक्टर और उनकी पत्नी के विवाह के समय के चित्र हैं। डाक्टर की अवस्था लगभग ३२ वर्ष की है, गोरे जवान, क्लीन-शेव्ड, काला पैंट, काले मोज़े, काले ही जूते भी पहने हुए हैं। नीले रंग के धारीदार कपड़े की कमीज़ है। इसी से मिलते-जुलते रंग की टाई है। कालर कड़ी और सफेद है। टाई का लटकता हुआ छोर एक सेफ्टी पिन से कमीज़ में अटका है। सिर के बाल कुछ कुछ सुनहरे से हैं। आदमी बड़े सज्जन प्रकृति के हैं। निःस्वार्थ सेवा करने की इन्हें खब्त सी सवार रहती है। इनकी धर्म-पत्नी भी जिनकी अवस्था लगभग २५ साल की होगी, बड़ी उदार हैं और डाक्टर के हर काम में सहायता पहुँचाती हैं। फुर्तीली ऐसी हैं कि अपने स्कूल में लम्बी दौड़ में पहला इनाम पाई थीं। सीनियर कैम्ब्रिज पास हैं। चेहरा सोने सा दमकता हुआ, आंखें बड़ी बड़ी, बाल सुनहरे और कुछ घुंघराले से फ्रेंच फैशन में कटे हुए हैं। आप डाक्टर जैसा उदार पति पाकर

बहुत प्रसन्न रहती हैं। स्नो और पाउडर के प्रयोग की आवश्यकता नहीं समझतीं। एक साधारण पेटी-कोट, एक जोड़ा मोज़े और साधारण जूते यही इनकी पोशाक है। हां, गोरी गोरी गोल बाहें स्वयं ही एक शोभा की अनोखी वस्तु हैं। उन पर काले अक्षरों में फूल-पत्तों के बीच डाक्टर का छोटा सा नाम अंकित है। डाक्टर साहब गम्भीर मुद्रा में लम्बी कोच पर एक किनारे बैठे हैं। उनकी पत्नी एक आराम कुर्सी के कोने को टेक कर तिरछी मुद्रा में खड़ी हैं।]

पत्नी—आख़िर तुमने क्या सोचा ?

डाक्टर—(चिन्तित भाव से) क्या बताऊं, कुछ समझ में नहीं आता। मिसेज़ गांधी की हालत दिन पर दिन खराब होती जाती है।

पत्नी—आज रात को तो उनके पांव मुड़ते भी न थे। बेचारी रोग से लड़ते लड़ते अब थक गई हैं। शरीर में रक्त का नाम नहीं। उधर रक्त-स्राव अब भी जारी है। ठठरी के सिवा और रह ही क्या गया है।

डाक्टर—ऐसी बहादुर और कलेजा रखने वाली स्त्री हमने आज तक नहीं देखी। उस दिन का दृश्य तुम्हें कुछ याद है जब उनका 'आपरेशन' हुआ था!

पत्नी—हां, हां तुमने उनको बेहोश भी तो नहीं किया था!

डाक्टर—वही तो कह रहा हूं। ऐसा बड़ा 'आपरेशन' बिना बेहोश किये मैंने आज तक किसी का नहीं किया, पर वह वीरांगना तुरन्त होश में ही 'आपरेशन' कराने को तैयार होगई।

पत्नी—और मज़ा तो यह था कि वह न चीख़ीं, न चिल्लाईं। उनकी सहन-शक्ति तो परले दरजे की है।

डाक्टर—और जब 'आपरेशन' समाप्त होगया तब उन्होंने क्या कहा था ? तुम्हें कुछ याद है ?

पत्नी—वह भी क्या कोई भूलने वाली चीज़ है। इतने भयानक दर्द के बीच भी ज़रा सा मुस्करा कर तुमको कहा, 'धन्यवाद।'

डाक्टर—और तुम्हें क्या कहा था ?

पत्नी—वह न बताऊंगी, तुम फिर से हंसोगे।

डाक्टर—नहीं जी, मैं हंसूंगा क्यों ? हमें तो बड़ा अच्छा लगा। हां, जरा कहो तो क्या कहा था ?

पत्नी—(सकुचाती हुई सिर नीचे करके) यही कहा था कि 'तुम्हारा सोहाग अचल हो, दूधे-पूते बनी रहो।

डाक्टर—(जरा मुस्कराते हुए) ओह, कितना सुन्दर है यह आशीर्वाद। हम लोगों के समाज में फ़ैशन का भूत सवार है। वहां कोई इतना प्यार भरा असीस

क्यों देने लगा ! जाने, तुम्हें क्यों अच्छा नहीं लगा ?

पत्नी—(चकित सी होकर) मुझे ? (फिर कुछ लज्जित सी होकर) मुझे बुरा ही कब लगा और स्त्रियों के दिल की बात तुम डाक्टर क्या जानो ? तुम तो चाकू लगाकर चीरना जानते हो। (मुस्कराती है)

डाक्टर—तो मैं ऐसा दावा ही कब करता हूं ? खैर, आज क्या करना चाहिए ?

पत्नी— क्या कोई ऐसी दवा नहीं जिससे मिसेज़ गाँधी की तबीयत सुधर सके ?

डाक्टर—है क्यों नहीं। उनको अगर 'मांस का शोरवा' या 'बीफ़ टी' (गो मांस की चाय) दी जाय तो तुरंत लाभ हो सकता है।

पत्नी—ये चीजें देना तो ज़रा मुश्किल काम है। वे जानबूझकर तो कभी ले ही नहीं सकतीं और न मि० गाँधी लेने देंगे।

डाक्टर—पर मैंने तो आधा घंटा हुआ 'मांस का शोरवा' दे दिया।

पत्नी—(बड़े आश्चर्य से) दे दिया !

डाक्टर—दे न देता तो क्या करता ? (ज़रा जोश में) क्या मैं अपने घर में रोगी को मरने दूं ? रोगी की

प्राण-रक्षा के लिये हमें सब कुछ देने का अधिकार है।

पत्नी—सो तो ठीक है, पर मि० गाँधी की······

डाक्टर—(बीच ही में बात काटकर) 'पर मि० गाँधी क्या?' वह इस संसार से परे किसी और लोक के प्राणी हैं क्या? यदि ऐसी बात है तो मैं भी लाचार हूं। मैं उनको अभी फ़ोन किये देता हूं।

पत्नी—क्या फ़ोन करने जा रहे हो?

डाक्टर—यही कि 'मांस का शोरवा' या 'बीफ़ टी' देना आवश्यक है, आप क्या कहते हैं।

पत्नी—अच्छा, ठीक है। यही पूछो।

(डाक्टर हाथ में फोन का चोंगा लेकर एक मुँह से लगाता है दूसरा कान से।)

पत्नी—उनका फ़ोन नम्बर तो याद है न, 'एटी फ़ाइव'।

डाक्टर—हां, हां, एटी फ़ाइव।·····हलो, हलो, ······यस, 'एटी फ़ाइव। आप कौन?···मि० गाँधी? ·····हां मैं हूं डाक्टर पी० एल०······देखिये, मिसेज़ गाँधी की तबीयत बहुत ख़राब होगई है। रक्त-स्राव बन्द नहीं होता, आज तो हाथ-पांव भी नहीं मुड़ते। उनको मांस का शोरवा देना बहुत ज़रूरी है। आप

क्या कहते हैं.........यह हमसे नहीं हो सकता। (डाक्टर की पत्नी अचरज भरी निगाहों से डाक्टर को देखती हैं) तो फिर अच्छा हो यदि आप अभी आजायं।

(डाक्टर फोन का चोंगा रख देता है)

पत्नी—(बड़ी उत्सुकता से) क्या कहा उन्होंने ?

डाक्टर—(कुछ चिन्तित और क्रोधित मुद्रा में) कहते हैं कि मेरी राय तो नहीं है, वैसे कस्तूर बाई इस मामले में पूरी स्वतन्त्र हैं। अगर वह चाहें तो उन्हें मांस का शोरवा अवश्य दीजिये।

पत्नी—तो तुमने क्या उत्तर दिया ?

डाक्टर—मैंने कह दिया कि ऐसी नाज़ुक हालत में मैं रोगी से कुछ भी पूछ नहीं सकता। अच्छा हो यदि आप स्वयं आजायं।

पत्नी—तो क्या वे आ रहे हैं ?

डाक्टर— हां, हां, वे अभी आये जाते हैं।

पत्नी—तो तुम उनसे शोरवा दे चुकने की बात कहोगे या नहीं ?

डाक्टर—(दृढ़ता के साथ) कहूंगा क्यों नहीं, उनसे सत्य न छिपाऊंगा।

पत्नी—यदि वे नाराज़ हुए तो ?

डाक्टर—तो मैं भी मजबूर हूं। जहां तक हो सका हमने तुमने मिसेज़ गांधी की सेवा की, या कुछ उठा रक्खा ?

पत्नी—नहीं, उठा तो कुछ भी न रखा।

डाक्टर—और हम अब भी तन-मन से सेवा करने को तैयार हैं पर यह प्रतिबन्ध तो हमसे न निभेगा। हममें उनमें सैद्धान्तिक अन्तर है।

पत्नी—(दरवाजे की ओर देखकर) वह देखिये मि० गांधी आ भी गये।

(मि० गांधी का प्रवेश, स्ट्राइप्ड सूट में। हाथ में हैट लेकर कमरे मे आते है। अवस्था ३८ वर्ष की है। चेहरा सावला और कुछ खिन्न है।)

पत्नी—आइये मि० गांधी (बढ़कर हाथ मिलाती है)

डाक्टर—आप बहुत जल्दी आगये! (बढ़कर हाथ मिलाता है)

मि० गांधी—हां, बात ही ऐसी नाज़ुक थी जो मुझे सिर पर पैर रखकर भागना पड़ा।

(डाक्टर मि० गांधी को एक कोचदार कुर्सी पर बैठने का इशारा करता है। मि० गांधी उस पर बैठ जाते हैं, हैट गोदी में रख लेते हैं। डाक्टर की पत्नी उनके बगल वाली

कुर्सी पर बैठती है। डाक्टर सामने वाले कोच पर बैठता है।)

डाक्टर—(ज़रा अपने को सम्भाल कर) तो आपने क्या निश्चय किया ?

मि० गाँधी—मैंने तो अपना निश्चय आपको बता ही दिया है।

डाक्टर की पत्नी—अच्छा, आप लोग बातें कीजिये तब तक मैं मिसेज़ गांधी के पास जाती हूं। (दोनों सज्जनों की ओर देखती है, मानों आंखों की राह आज्ञा चाहती हो।)

डाक्टर— अच्छा जाओ, पर यहां की कोई चर्चा उनके सामने न करना।

पत्नी—नहीं, नहीं, भला ऐसी भूल कर सकती हूं ? (मि० गांधी की ओर देखकर) मि० गांधी क्षमा कीजियेगा। (प्रस्थान)

डाक्टर—तो आप नहीं चाहते कि मिसेज़ गाँधी को मांस का शोरवा दिया जाय।

मि० गाँधी—मैं जीवन को इतना अमूल्य नहीं समझता कि वह किसी और जीव का प्राण लेकर बचाया जाय।

डाक्टर—पर आपके इस सिद्धान्त से संसार से

जीव-हिंसा न उठ जायगी !

मि० गांधी—न उठे, पर मैं अपने व्यक्तिगत और निजी कल्याण के लिये किसी भी प्रकार की जीव-हिंसा करने को तैयार नहीं।

डाक्टर—मगर पुराने जमाने में हिन्दू लोग तो मांस खाते थे, क्षत्रिय राजे शिकार करते थे, यज्ञों में जानवरों की बलि होती थी, यह सब क्या है ?

मि० गांधी—यह सब ठीक है पर मैं उन लोगों के इन कर्मों को ठीक नहीं समझता।

डाक्टर—अच्छा, आप रामचन्द्र जी की तो पूजा करते हैं, सवेरे सवेरे उनका नाम लेते हैं ?

मि० गांधी—अवश्य ।

डाक्टर—तो उन्होंने भी तो राक्षसों को मारा, क्या यह हिंसा न थी ?

मि० गाँधी—देखो डाक्टर, रामचन्द्र जी आदमी नहीं बल्कि अवतारी पुरुष थे। स्वयं ईश्वर थे। वे सब कुछ कर सकते थे। उन्होंने जिसे मारा उसे मुक्ति भी दी। पर मैं तो साधारण मनुष्य हूं। मैं भला किसी को मुक्ति कहां से दूंगा और उनकी हमारी समता ही क्या ?

डाक्टर—तो आप किसी को नहीं मानते ? आपका धर्म बिल्कुल निराला है ?

मि० गाँधी—मैं कैसे बताऊं आपको कि मेरा धर्म क्या है ?

डाक्टर—अच्छा, आपको याद है एक दिन आपने किसी ऋषि की कथा कही थी जिन्होंने अकाल पड़ने पर चुराकर कुत्ते का मांस खाया था और बाद को बताया कि यह 'आपद्-धर्म' था।

मि० गाँधी—हां, याद तो है, पर यह लागू कहां होता है ?

डाक्टर—(कुछ चकित होकर) अरे, लागू नहीं होता ? वह बेचारी चारपाई पर पड़ी पड़ी मौत की घड़ियां गिन रही हैं और 'आपद्-धर्म' लागू ही नहीं होता ? आप वकील होकर ऐसी बात करते हैं ? मैंने तो बड़े बड़े हिन्दुओं को देखा है जो दवा के रूप में शराब और मांस लेने से जरा भी नहीं हिचकते।

मि० गांधी—तो मैं ही कब मना करता हूं, विश्वामित्र ऋषि ने स्वयं मांस चुराकर खाया था। कस्तूर बा यदि स्वयं कहे तो दीजिये। हमें उसमें कोई आपत्ति न होगी। कहिये, तो मैं पूछ लूं ?

डाक्टर—(आश्चर्य से) अरे, ऐसी अवस्था में आप रोगी से सलाह लेने जाते हैं ? आप बड़े कठोर आदमी हैं मि० गांधी !

मि० गांधी—(जाते हुए) परिस्थितियां कठोर बना देती हैं डाक्टर !

(पटाक्षेप)

दृश्य द्वितीय

[डाक्टर के बंगले का एक कमरा जिसमें कस्तूर बा एक चारपाई पर पड़ी हैं। चारपाई के पाये, लोहे के पतले पतले छड़ हैं। गद्दे पर एक सुफ़ेद और सादी चद्दर बिछी है। उस पर कस्तूर बा का सूक्ष्म शरीर हरे रंग के कम्बल से लिपटा पड़ा है। तकिये पर सूखा हुआ उदास रक्तहीन चेहरा झुका पड़ा है। पास ही नन्ही सी लकड़ी की अलमारी पर कुछ शीशियां रक्खी हैं। एक छोटी सी मेज़ पर एक सुराही जल और एक शीशे का गिलास रखा है। खूँटी पर तौलिया, स्टैण्ड पर चीनी के बरतन में पानी, और ताक़ पर साबुन की डिबिया रखी है। कमरा साफ सुथरा तूतिये से पोता हुआ है। इसमें एक स्टूल और एक कुर्सी के अलावा और सामान भी नहीं है। हां चारपाई के नीचे एक चीनी का 'पॉट' रखा है। डाक्टर की पत्नी स्टूल पर बैठकर कस्तूर बा के पाव में कोई 'पाउडर' मल रही है जिससे गर्मी आजाय।]

(मि० गांधी का प्रवेश—वेश-भूषा पूर्ववत्)

डा० की पत्नी—(मि० गांधी को देखकर, धीरे से कुर्सी पर बैठने का इशारा करती है, फिर पूर्ववत् काम में लगी हुई आहिस्ते से) मिसेज़ गाँधी।

मि० गाँधी—(कस्तूर बा की आखें मुँदी हुई देखकर धीरे से) यदि नींद आई हो तो सोने दो।

डा० की पत्नी—(मि० गाधी के कान के पास) नहीं यूंही आंख मूंद लिया है।.....मिसेज़ गांधी (ज़रा सा और ज़ोर से) मिसेज़ गांधी।

(कस्तूर बा आख खोलती हैं)

कस्तूर बा—(मि० गाधी को देखकर आखे ऐसे नीचे करती हैं मानों प्रणाम कर रही हों).....आप...आ...ग.....ये?

मि० गाँधी—हां, कस्तूर, तुम्हारी कैसी तबियत है?

कस्तूर बा—(धीरे धीरे) आज तो कुछ हल्की है, कल बहुत खराब हो गई थी। सुना...वेहोश...भी हुई थी।

मि० गांधी—(कस्तूर बा का एक हाथ अपने हाथ में लेकर) तुम तो बहुत कमज़ोर हो गई हो।

कस्तूर बा—हां, कमज़ोरी बहुत आगई है...बदन में खन ही नहीं है...फिर.....बल कहां से आये!

मि० गांधी—अच्छा सुनो, (कस्तूर बा आंखे उठाकर गाधी जी का मुँह देखने लगती हैं) डाक्टर कहते हैं कि मांस का शोरवा देने से तुम्हें बहुत जल्दी लाभ होगा और शरीर में बल भी आजायगा। वे केवल आज्ञा चाहते हैं। तो तुम्हें इसमें कोई हिचक तो नहीं है ?

कस्तूर बा—(विस्फरित नेत्रों से मि० गांधी को देखकर) मांस का शोरवा ! (मुँह ढक लेती है)

(मि० गांधी हक्के-बक्के रह जाते हैं मानों तीर मार दिया हो। डा० की पत्नी को भी एक धक्का सा लगता है।)

डा० की पत्नी—(धीरे से) मि० गांधी आपने यह क्या किया ?

मि० गांधी—क्या बताऊं, धर्म की गति बड़ी कठोर है।

कस्तूर बा—(मुँह पर से कम्बल हटाती हुई) आप यह प्रश्न करते हैं ?

मि० गांधी—आफ़त में क्या नहीं किया जाता कस्तूर ! प्राण-रक्षा के लिये विश्वामित्र जी ने कुत्ते का मांस खाया था। फिर दवा रूप में कोई भी चीज़ लेने में क्या हर्ज है ? लोग तो शराब तक दवा में पी

जाते हैं।

(कस्तूर बा आंख मूंद लेती है और मौन हो जाती है, जैसे वह कुछ सुनना ही नहीं चाहती।)

मि० गांधी—कुछ भी बोलो, कस्तूर, अपनी इच्छा तो प्रगट करो।

डा० की पत्नी—(धीरे से) आप व्यर्थ बेचारी को परेशान कर रहे हैं।

कस्तूर बा—(आंखें खोलकर) यदि आपसे कोई दवा रूप में मांस का शोरवा लेने को कहे तो ?

मि० गांधी—तब ऐसी अवस्था में मैं क्या करता यह तो कहना बहुत कठिन है।

कस्तूर बा—यानी भरसक आप न लेते !

मि० गांधी—मैं अपने जीवन को इतना अमूल्य नहीं समझता कि मांस के शोरवे पर जीवित रखूं।

(डा० की पत्नी बड़े आश्चर्य से मि० गांधी का मुंह देखती है)

कस्तूर बा—(आंखें फाड़कर ताकती हुई) तो मैं ही कब अमर होने की साध लेकर आई हूं।

मि० गांधी—(बड़ी नरमी और प्रेम से कस्तूर बा की बांह सहलाते हुए) नहीं कस्तूर, यह कोई जरूरी नहीं

कि तुम मेरी नक़ल करो। तुम्हारे प्राण की कीमत बहुत है और मनुस्मृति में तो मांस खाने की आज्ञा है। फिर यह तो एक विशेष दशा में केवल 'शोरवा' लेने का प्रश्न है। अगर तुम इसे ले लोगी तो मुझको बड़ा संतोष होगा। बिचारे डाक्टर का काम कितना आसान हो जायगा! (इतना कहकर कस्तूर बा का मुँह ताकते हैं।)

कस्तूर बा—(धीरे धीरे) और हमें कितनी ग्लानि होगी? मैं मरते समय दुनिया भर का नरक अपने शरीर में नहीं बटोरना चाहती। आप हमें यहां से ले चलिये। आपकी गोदी में मर जाना क़बूल है पर मांस का शोरवा न लूंगी। मनुष्य-जन्म बार बार नहीं मिलता।

मि० गाँधी—ज़रा सोच लो कस्तूर, तुम्हारे हठ से हम तीनों को कितना कष्ट पहुंचेगा और प्राण संकट में पड़ेंगे अलग से।

कस्तूर बा—फिर मैं क्या कर सकती हूं। आप मेरे देवता हैं। हुक्म दीजिये पालन करूंगी, पर अपनी इच्छा से तो सात जन्म में भी शोरवा न लूंगी। (आखों में आंसू के कण नाचते हैं।)

मि० गांधी—(अति दुखी होकर) ऐसा मुझसे नहीं

हो सकता, कस्तूर।

(कोट डाले हुए हाथ में स्टेथस्कोप लिये डाक्टर का अचानक प्रवेश)

डाक्टर—(व्यंग के साथ) ऐसा हमसे नहीं हो सकता! आपसे क्या हो सकता है मि० गांधी ? आप जैसा निष्ठुर पति तो मैंने आज तक नहीं देखा।

मि० गांधी—तो मैं क्या कर सकता हूं डाक्टर। ऐसे मामले में आज्ञा देना मैं अधर्म समझता हूं।

डाक्टर—ऐसी दशा में रोगी से सलाह लेते हुए तुम्हें शर्म नहीं आई ? तुम इतनी बात नहीं समझते कि बिना 'शोरवा' इनकी प्राण-रक्षा नहीं हो सकती।

मि० गांधी—मैं सब समझता हूं, पर जबरदस्ती शोरवा देने के पक्ष में मैं नहीं हूं।

डाक्टर—तो बिना 'शोरवा' दिये मैं अपने घर में इनको नहीं रख सकता। यदि आपको अपना धर्म मालूम है तो मैं भी अपना धर्म जानता हूं। किसी तरह रोगी की प्राण-रक्षा करना ही हम डाक्टरों का धर्म है।

मि० गांधी—इसके मानी यह हैं कि मैं इनको अभी यहां से ले जाऊं।

डाक्टर—यह मैं कहां कहता हूं। हम तो दोनों आदमी तन-मन से अब भी सेवा करने को तैयार हैं पर हम घर में रोगी को दवा रहते मरने न देंगे।

मि० गाँधी—तो हम भी ऐसी दवा से प्राण-रक्षा नहीं करेंगे। मैं जा रहा हूं अभी रिक्शा ठीक करने। इनको पल भर में इस घर से लेकर चला जाऊंगा।

डाक्टर—अगर रास्ते में प्राण निकल जायं तो? आपको मालूम है जरा से धक्के में इनकी जान निकल सकती है?

मि० गांधी—हमारे लिये और कोई रास्ता ही नहीं।

डाक्टर—आप जिस शोरवे से बचाने के लिये इतना करने पर उतारू हुए हैं वह तो इनको दिया जा चुका हूं।

(मानों बिजली गिरती है। नेपथ्य से 'झन्न' का शब्द होता है। कस्तूर बा चौंक उठती हैं। गांधी जी आग-बबूला हो उठते हैं। डाक्टर की पत्नी चंचल से उठती है।)

मि० गांधी—यह क्या डाक्टर? धोखा!

डाक्टर—धोखा नहीं, धर्म। हाथ जोड़ता हूं अब भी रुक जाइये।

(सब की आखों में आसू भरे हैं।)

पटाक्षेप

दृश्य तृतीय

[फिनिक्स आश्रम का एक कमरा, कच्चे ईंट की दीवार पर टीन पड़ी है। उसके ऊपर शायद कुछ फूस भी डाली गई है। एक चारपाई पर मि० गांधी की पत्नी कस्तूर बा पड़ी हैं। पेट पर मिट्टी की पट्टी बंधी है। पास ही एक ताक़ पर दो तीन शीशियां पड़ी हैं। चारपाई के नीचे चीनी का एक 'पॉट' पड़ा है। एक स्टूल पर सुराही में जल और एक गिलास रखा है। एक स्टूल पर मि० गांधी, फिनिक्स आश्रम के कुलपति, धोती और कमीज़ पहने बैठे हैं, कोई वैद्यक की पुस्तक उनके हाथ में है।]

मि० गांधी—तबीयत कुछ हल्की जान पड़ती है ?

कस्तूर बा—हमें तो कोई परिवर्तन नहीं मालूम होता।

मि० गांधी—रक्त-स्राव में कुछ कमी आई ?

कस्तूर बा—बिल्कुल नहीं, वह तो और बढ़ता सा जान पड़ता है।

मि० गांधी—(चिन्तित मुद्रा मे) कुछ समझ में नहीं आता क्या किया जाय।

कस्तूर बा—जो कुछ आप करते हैं किये जाइये, आगे भगवान मालिक हैं।

मि० गांधी—(पुस्तक के एक पृष्ट पर कुछ देर तक

ध्यान जमाकर, सिर नीचे किये ही बोलते हैं) मिट्टी और पानी के उपचार पर तुम्हारा विश्वास है या नहीं ?

कस्तूर बा—(मि० गांधी की ओर ज़रा गौर से देखकर) है क्यों नहीं ? आपको यह संदेह कैसे हुआ ?

मि० गांधी—संदेह की कोई बात नहीं। जब कोई लाभ इस उपचार से नहीं होता हो इस प्रश्न का उठना स्वाभाविक है।

कस्तूर बा—हमें मिट्टी, पानी या किसी भी दवा में विश्वास नहीं। हमें सिर्फ आप में विश्वास है, आप जो कुछ भी करें वही मेरी दवा है।

मि० गांधी—(पुस्तक से आखे उठाकर कस्तूर बा का मुंह देखते हैं, मानों समझ में न आया हो कि वह क्या कह रही हैं) मैं जो कुछ भी करूं वही तुम्हारी दवा है ?

कस्तूर बा—(ज़रा ज़ोर देकर) आपको मेरी बातों में विश्वास नहीं क्या ?

मि० गांधी—नहीं, विश्वास का प्रश्न नहीं है। मैं सोच रहा हूं कि यदि तुम्हारा विश्वास इतना प्रबल है तो तुम्हें बहुत शीघ्र अच्छा हो जाना चाहिये।

कस्तूर बा—वह कैसे ?

मि० गांधी—(धीरे धीरे) इधर मैं कई दिनों से तुम्हारे रोग के विषय में चिन्तित हो उठा हूं।

कस्तूर बा—(अव्यवस्थित सी होकर) चिन्तित होने से लाभ ?

मि० गांधी—बता रहा हूं, सुनो ध्यान से। 'चिकित्सा-चद्रोदय' को कई दिनों से उलटने पर मुझे यह मालूम हुआ है कि यदि नमक और दाल छोड़ दी जाय तो रक्त-स्राव के रोग में अपूर्व लाभ हो सकता है।

कस्तूर बा—(ज़रा चकित सी होकर) नमक और दाल!

मि० गांधी—हां, ये दोनों छोड़ने से स्वास्थ्य पर अति शीघ्र लाभ-प्रद प्रभाव हो सकता है। मैं जानता हूं ये दोनों चीजें तुम्हें कितनी प्रिय हैं इसी से तुमसे कहते हुए संकोच होता था, पर आज तुम्हारे हिम्मत दिलाने पर मैंने कह ही डाला।

कस्तूर बा—किसी एक को छोड़ने से काम न चलेगा ?

मि० गांधी—मेरा विश्वास है प्रयोग अपूर्ण रहेगा। फिर जैसे इतनी दवायें करके देखी गईं कुछ दिन इसे भी देखने में क्या हर्ज है।

कस्तूर बा—क्या लाभ होना निश्चित नहीं है ?

मि० गांधी—जब कोई डाक्टर, वैद्य निश्चय लाभ का दावा नहीं करता तो फिर मैं कैसे कर सकता हूं ?

कस्तूर बा—(धीरे धीरे, मानों अपने से ही कह रही हो) एक तो दाल-नमक दोनों को एक साथ छोड़ना, फिर लाभ का भी कुछ ठीक-ठिकाना नहीं।

मि० गांधी—पर चेष्टा करके देखने में भला क्या लगता है कस्तूर। तुम स्वयं इस पुस्तक में देखो न क्या लिखा है। (पुस्तक कस्तूर बा को देने की कोशिश करते हैं)

कस्तूर बा—रहने दीजिये, मैं पुस्तक देखकर क्या करूंगी। आप कोई झूठ थोड़े ही कहते हैं।

मि० गांधी—फिर प्राण-रक्षा के लिये यह कौन मुश्किल काम है ?

कस्तूर बा—दाल-नमक दोनों त्याग करने वाले तो बिरले ही होंगे।

मि० गांधी—यदि मैं तुम्हारी तरह बीमार होता और मुझे कोई डाक्टर-वैद्य दाल-नमक छोड़ने को कहता तो मैं तो तुरंत छोड़ देता।

कस्तूर बा—(जरा व्यंग के साथ) 'कहने और

करने' में बड़ा बीच होता है।

मि० गांधी—(मुस्करा कर) मेरे कहने और करने में बीच नहीं हुआ करता। और बीमारी क्या, लो मैं यूंही एक वर्ष के लिये दाल और नमक दोनों तुम्हारे लिये छोड़ देता हूं। तुम छोड़ो या न छोड़ो, तुम्हारी जैसी इच्छा।

(पर्दे के पीछे से झन्न से आवाज़ होती है और एक करुण राग की ध्वनि गूँजने लगती है)

कस्तूर बा—(चौंककर उठ बैठी) यह आपने क्या किया?

मि० गांधी—(कस्तूर बा को बिछौने पर पूर्ववत् लेटाते हुए) शान्त हो कस्तूर, इतनी विकल क्यों? बीमारी बिगड़ जायगी।

कस्तूर बा—(उदास होकर बिस्तर पर पड़ जाती है; आंखों से आसुओं की अविरल धारा बह चलती है।) मुझसे बड़ी भूल हुई क्षमा कीजिये। आप अपना व्रत लौटा लीजिये। मैं नमक-दाल आजन्म के लिये छोड़ सकती हूं, पर आप अपनी बात उठाइये।

मि० गांधी—(कस्तूर बा के सिर पर हाथ फेरते हुए और जेब से रूमाल लेकर आसू पोंछते हुए) घबरा न

कस्तूर। व्रत लेकर छोड़ना पाप है। फिर हम दोनों साथ साथ व्रत रखेंगे तो कितनी सुविधा रहेगी। स्वादहीन वस्तुओं को साथ साथ खाने पर उनमें कितना मधुर स्वाद आयेगा, व्रत बिल्कुल सरल हो जायगा। तू निश्चिन्त हो जा, घबरा नहीं।

कस्तूर बा—आप बड़े वैसे हैं, जन्म के हठी। (आसू अब भी बरौनियों में नाच रहे हैं)

मि० गांधी—कस्तूर, मांस के शोरबे से तो अच्छा है।

(दोनों हंस पड़ते हैं। कस्तूर बा की आखों में आंसू और होटों पर हंसी बिल्कुल अलौकिक है।)

(पटाक्षेप)

धर्म-संकट

धर्म संकट

[स्टेज के दो हिस्से हैं, एक भीतरी, दूसरा बाहरी। दोनों के बीच में एक रंगीन परदा पड़ा है जो इच्छानुसार उठाया और गिराया जा सकता है। भीतरी हिस्सा रोगी का कमरा है जिसमें सामने ही दीवार से लगी हुई लोहे के पावों वाली चारपाई पड़ी है। चारपाई पर एक मोटा तोशक है जो सफेद और सादी चद्दर से ढका है। चद्दर के छोर चारों ओर से लपेट कर तोशक के नीचे कर दिये गये हैं। उसी पर मणिलाल, मि० गांधी का दूसरा पुत्र, एक दस वर्ष का सांवले रंग वाला बालक लेटा है। चेहरा दुबला और पीला पड़ गया है। वह हरे रंग के दो ऊनी कम्बल ओढ़े है। तकिये पर टिका हुआ केवल चेहरा दिखाई देता है। सिरहाने के पास ही एक स्टूल पड़ा है। इधर ही एक रिवाल्विङ्ग अलमारी में चार-पाच शीशियां, कुछ टिकियेवाली कागज़ की पैकेटे, दवा पीने के लिये शीशे का नन्हा सा गिलास और थर्मामीटर पड़ा है। पाव की ओर एक स्टूल पर सुराही गिलास से ढक कर रक्खी है। कोने में एक लकड़ी के स्टेण्ड पर एक चीनी बर्तन आधा पानी से भरा रक्खा है। पास ही दीवार पर एक खूंटी से सफ़ेद तौलिया लटक रहा है। वहीं ताख पर एक केस में साबुन रखा है।

बीचवाले परदे के बाहर का हिस्सा मि० गांधी के बंगले का ड्राइंगरूम है। इसके दो ओर दो दरवाज़े हैं जिन पर फूल कढ़े हुए दो रंगीन परदे (कर्टेन्स) लटक रहे हैं। फ़र्श पर एक लम्बी-चौड़ी नई दरी बिछी है। दरी के ऊपर क़ालीन है। कमरे के ठीक बीच में एक टी टेबिल पड़ी है। उसके एक ओर एक स्प्रिङ्गदार लम्बी कोच पड़ी है जिसके एक ओर टेकने के लिये बांह है पर दूसरी ओर बिल्कुल साफ़ है। टेबिल के दूसरी ओर तीन स्प्रिङ्गदार कुर्सियां पड़ी हैं जो हरे 'कवर' से ढकी हैं। इन्हीं के दोनों ओर सिकुड़ कर बेंत की दो खूबसूरत बाहदार कुर्सियां पड़ी हैं। इन कुर्सियों के सामनेवाली दीवार के निचले हिस्से में 'हर्थ' बना है जिसमें आग तो कभी नहीं जलती, हां उसके ऊपर दो फूलदानों में फूल सजाकर रखे हैं। दीपावली पर की खरीदी हुई विष्णु, राम और कृष्ण की चार-पांच मूर्तियां भी वहीं अकड़ी पड़ी हैं। दो तश्तरियों में मिट्टी के बनावटी और रंगीन ककड़िया, खरबूजे, ईख के टुकड़े, केले और अनार पड़े हैं। इन्हीं के ऊपर दीवार पर महात्मा टालस्टाय की एक बड़ी तस्वीर सुनहरे फ्रेम में लगी है। लम्बी सफ़ेद दाढ़ी के साथ उस महान् आत्मा का चित्र एकाएक देखने पर जान पड़ता है कि आजकल के 'रवि बाबू' का चित्र हो। उसके सामने की दीवार पर सुनहरे फ्रेम मे महात्मा ईसा का चित्र है जिसमें वह लकड़ी की सूली पर खड़े हैं—सिर झुकाये, और कलाइयों में, सिर में तथा पांवों में कील ठुकी हैं। इन जगहों से रक्त की धारा बह रही है।

इसी कमरे में एक कोने में टेलीफोन का चोंगा एक नन्हे से टेबिल पर रखा है। इस बाहरी हिस्से के बाहर एक परदा है। बाहरी परदा उठता है और मि० गांधी का ड्राइंग रूम सामने आता है। मिस जेन एक ओर से आती है। यह २० वर्ष की ईसाई महिला है। सोने सा दमकता रूप, वैसा ही रंग, इकहरा पर पुष्ट शरीर, सिर पर सफेद पट्टी, नर्सोंवाली, बंधी है। सफ़ेद ही पेटीकोट और मौजे भी हैं। हां जूती काली ज़रूर है, क़दम जल्दी जल्दी उठते हैं मानों जूती में ही स्प्रिङ्ग लगे हों, यौवन चढ़ाव पर है, नशीलापन और मद भी प्रचुर मात्रा में है, पर आज चेहरा कुछ उतरा सा है। सारा वातावरण शान्त और गम्भीर है, मानों कोई आंधी आने वाली हो। मिस जेन स्टेज पर एक कोने से आती है और सीधे दूसरे कोने में पड़े टेलीफ़ोन के चोंगे के पास जाकर उसे हाथ में उठा लेती है। उसे मुंह और कान में लगा लेती है। 'घर घर' की आवाज़ होती है।]

मिस जेन—वन्–नाट–सेविन·········येस वन्–नाट–सेविन··········हां, आप कौन?·····डा० रुस्तम?···अच्छी बात, मैं हूं मिस जेन। मि० गांधी के बंगले से बोल रही हूं·····देखिये, मि० गांधी के लड़के मणिलाल की तबीयत बहुत ख़राब हो गई है, काला ज्वर बढ़कर सन्निपात में बदल गया है, टेम्परेचर १०४ है। आप जल्दी चले आइये·······

ऐ, पांच मिनट में आ रहे हैं ?·····अच्छी बात।

(मिस जेन टेलीफ़ोन का चोंगा रख देती है और जिस राह से आई थी उसी तरफ से भीतरी कमरे में चली जाती है। इसी समय भीतरी परदा उठता है। मणिलाल चारपाई पर है, स्टूल पर मि० गांधी बैठे हैं। ये ३३ वर्ष के नवजवान हैं। सावला रंग, नाटा क़द, लम्बी बाहें, छोटी छोटी मूँछे, औसत बाल हैं। पूरी बाह की सफेद कमीज़ पर सफेद पतलून पहने हैं। मोज़े और जूते काले हैं, हाथ से पंखा झल रहे हैं। मिस जेन पैताने की ओर खड़ी है, उसकी कलाई पर सुनहरे चेनवाली घड़ी धीरे धीरे अपना जीवन जता रही है। छाती के पास फाऊंटेनपेन पेटीकोट में लगा है।)

मणिलाल—(एकाएक) बापू·····बापू ?

मि० गाँधी—क्या है बेटा ?

मणिलाल—वह देखो हीरा भइया मेरी गेंद लेकर भागे जा रहे हैं।

मि० गाँधी—यहां हीरा कहां है बेटा ?

मणिलाल—बापू, वह क्या भागे जा रहे हैं, तुमको दिखाई नहीं देता बापू ? तुम तो बहाना कर रहे हो; मेरी गेंद दिला दो।

मि० गांधी—अच्छा शान्त रह बेटा, मैं गेंद तुम्हें जरूर दिला दूंगा।

मणिलाल—'ज़रूर दिला दूंगा' कब दिला दोगे? जब वह कहीं चुरा देंगे?

मि० गाँधी—नहीं बेटा, चुप रहो, गेंद तुरन्त आजायगी।

मणिलाल—तुम गेंद नहीं दिलाओगे बापू। हटो, मैं खुद छीन लाता हूं।

(उठने का प्रयास करता है। कम्बल ज़ोर से फेंक देता है। मि० गांधी उसकी बांह पकड़कर फिर लेटाते हैं और मिस जेन फ़र्श पर से कम्बल उठाकर मणि को ठीक से ओढ़ाती हैं)

मणिलाल—ये कौन? अम्मा?

मि० गाँधी—नहीं बेटा, ये हैं मिस जेन; इनको पहचानते नहीं हो?

मणिलाल—मैं खूब पहचानता हूं, बापू। तुम्हीं नहीं पहचानते। ये हैं अम्मा। अम्मा? बोलती क्यों नहीं?

मिस जेन—(आखों में आंसू छलछला आते हैं) क्या है मणि बाबू?

मणिलाल—मणि बाबू!······अम्मा, हमें बाबू न कहो, यह तुमको हो क्या गया है? देखो, बापू कहते हैं, तुम अम्मा नहीं हो? (हंसता है) अम्मा, हमें

केवल मणि कहो।

मिस जेन—अच्छी बात; मणि, शान्त रहो, बोलो नहीं।

मणिलाल—अम्मा, देख रही हो ये समुद्र की लहरें? कितनी ऊंची उठ रही हैं! हमारी नाव कितनी छोटी है अम्मा?

मिस जेन—तुम चुप क्यों नहीं रहते मणि?

मणिलाल—चुप कैसे रहूं? वह देखो लहरों के छींटों से तुम्हारे कपड़े भीग रहे हैं अम्मा········ (मि० गांधी के हाथ का हिलता पंखा देखकर) अम्मा, बापू कितनी मुस्तैदी से डांड़ खे रहे हैं···या पतवार पकड़े हैं?·····नाव डूबेगी या पार लगेगी बापू?

मि० गांधी—(आंसू आंखों की कोर से झांकते हैं) भगवान जाने, बेटा।

मणिलाल—तुम रोते क्यों हो बापू?···अरे अम्मा भी रो रही है। नाव डूबने वाली है क्या बापू?···बापू, ठीक ठीक बता दो।

मि० गाँधी—'राम, राम' कहो बेटा।

मणिलाल—(धीरे धीरे) 'राम राम राम'···(एकाएक) बापू, यह उड़नखटोला देखो। फूल के गजरों

से चारों ओर सजा है। इसमें चार सुन्दर पुरुष बैठे हैं। ये कोई देवता हैं क्या बापू ?

मि० गांधी—हां बेटा।

मणिलाल—ठीक है, इनके रूप 'हथे' पर पड़ी 'विष्णु' की मूर्ति से मिलते-जुलते हैं। ये बड़े अच्छे लगते हैं बापू।.....बापू, इनसे कह दो, जरा हमको भी उड़न-खटोले पर चढ़ा लें।

मि० गांधी— अभी न चढ़ो, बेटा। (आंसू धार बनकर गालों पर लुढक चलते हैं।)

मणिलाल—क्यों बापू ?...देखो उनमें से दो हमारे पास आरहे हैं। वे हमें बुला रहे हैं बापू। जाऊं बापू ? चला जाऊं ?

मि० गांधी—शान्त रहो मेरे मणि।

मणिलाल—नहीं बापू, जरा सा जाने दो। यह तो रामचन्द्र जी का पुष्पक-विमान जान पड़ता है, बापू; तभी फूलों से लदा है। उस पर राम और लक्ष्मण बैठे हैं, बीच में सीता जी भी अब दिखाई देते हैं बापू; हमें जाने दो बापू, (उठ कर जाने के लिये आकाश में हाथ फैलाता है)

मि० गाँधी—(हाथ पकड़ कर उसे शान्त करते हुए)

अभी से ऐसा न करो, बेटा।

मणिलाल—ये लो, वे तो उड़े जा रहे हैं, बापू। वे लोग चले गये, बापू। तुमने हमको जाने नहीं दिया, (रोने लगता है) विमान चला गया, मैं न गया। जाओ बापू, अब तुमसे न बोलूंगा।

(डाक्टर का प्रवेश टेलीफोन के पास वाले दरवाज़े से। डाक्टर लगभग ३४ वर्ष के एक पारसी सज्जन हैं। नीले कपड़े पर सफेद स्ट्राइप वाले कपड़े का सूट पहने हैं, सफेद कालर से धारीदार लाल रंग की टाई लटक रही है। रंग गेहुवा, चेहरा गोल और चमकदार है। शरीर स्वस्थ है, मानों युवावस्था स्वयं डाक्टर बनकर आई हो। आखें बड़ी बड़ी हैं, रूप इतना मोहक है कि रोगी को उनके दर्शन से ही बहुत कुछ आराम हो सकता है। हाथ में स्टेथस्कोप है।)

मिस जेन—(डाक्टर के पास जाकर) गुड मार्निङ्ग, डा० रुस्तम।

डाक्टर—गुड मार्निङ्ग; मि० गाँधी कहां हैं?

मिस जेन—आइये, (मणि के पास ले जा रही है; मि० गाधी और डाक्टर हाथ मिलाते हैं।)

डाक्टर—क्या हाल है? (उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही, कान में स्टेथस्कोप की छू न्ली लगाता है। मिस जेन

मणि का कम्बल थोड़ा सा हटा देती है। डाक्टर अपने यंत्र से मणि की छाती, पेट और बग़ल वगैरा की जांच करता है) थर्मामीटर कहां है ? (मिस जेन थर्मामीटर उठाकर अलमारी से देती है। डाक्टर मणि के मुंह में थर्मामीटर देकर उसकी नाड़ी पकड़ता है और अपनी हाथ की घड़ी को एकटक देखता है।)

डाक्टर—(दो मिनट बाद थर्मामीटर निकाल कर देखते हुए) हंड्रेड फ़ाइव, (मिस जेन के हाथ में थर्मामीटर देते हुए) पाख़ाना कैसा है ?

मिस जेन—खाना तो इन्होंने आज दस दिन से खाया ही नहीं, इसलिये पाख़ाना होता ही नहीं।

डाक्टर—यूरिन ?

मिस जेन—बिल्कुल पीला पेशाब होता है।

डाक्टर—इनका 'यूरिन' जांच करने के लिये मेरे पास भेजिये। यह बुख़ार कितने दिन से आ रहा है ?

मि० गाँधी—क़रीब क़रीब बारह दिन से।

डाक्टर—आप खाना क्या दे रहे हैं ?

मि० गाँधी—गरम दूध और संतरे का रस।

डाक्टर—अच्छा, यह बुख़ार कभी उतरता भी है ?

मिस जेन—सुबह थोड़ा सा कम हो जाता है।

डाक्टर—टेम्परेचर-चार्ट कहां है ?

मिस जेन—(दीवाल पर से टेम्परेचर चार्ट उतार कर देती हुई) टेम्परेचर काफ़ी 'हाइ' रहता है।

डाक्टर—(टेम्परेचर-चार्ट को गौर से देखते हुए) चार दिन से पाख़ाना नहीं हुआ, इसके पहले पाख़ाने का क्या हाल था ?

मि० गांधी—पीला, पतला और बदबूदार होता था।

डाक्टर—और कोई खास बात।

मणिलाल—ये राजा इन्द्र हैं, बापू ?

डाक्टर—(ज़रा सा मुस्कराकर) हां, बेटा, कहो क्या कहना चाहते हो ?

मणिलाल—आप हमको विमान पर चढ़ाकर स्वर्ग में ले चलेंगे ?

डाक्टर—(असमंजस में पड़कर) अभी अच्छे हो जाओ तब न ?

मणिलाल—तो हमें हुआ क्या है ? आप भी बापू की तरह बहाना करते हैं।

डाक्टर—नहीं बेटा, शान्त रहो, मैं बहाना नहीं करता।

(डाक्टर कोने में पड़े चीनी के बर्तन में साबुन लेकर हाथ धोता है)

डाक्टर—'डिलिरियम डेवलप' कर गया है, क्यों मि० गाँधी ?

मि० गाँधी—जी हां, आपके आने से पहले भी इसी का जोर था।

डाक्टर—(हाथ धोकर तौलिये से हाथ पोंछ रहा है) कितने दिन से इसका ज़ोर है ?

मि० गाँधी—यही चार-पांच दिन से।

(दोनों रोगी के कमरे से निकलकर ड्राइंग रूम में आते हैं। मिस जेन टेम्परेचर चार्ट को ठीक जगह पर टांगती है। इसी समय भीतरी परदा गिरता है। टी-टेबिल के आमने-सामने वाली कुर्सियों पर मि० गांधी और डाक्टर बैठ जाते हैं।)

मि० गाँधी—ज़रा सी चाय मंगाऊं ?

डाक्टर—जी नहीं, कोई खास ज़रूरत तो नहीं है।

मि० गाँधी—नहीं, ज़रा सी पी लीजिये (जोर से) मिस जेन······मिस जेन।

मिस जेन—(भीतर ही से) जी हां, अभी आई। (एक ओर से मिस जेन उठकर मेज़ के पास खड़ी हो जाती है) कहिये, क्या आज्ञा ?

मि० गांधी—डाक्टर रुस्तम को ज़रा चाय पिलाओ।

डाक्टर—नहीं, रहने दीजिये, (मिस जेन की ओर देखकर) कष्ट करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

मिस जेन—वाह, बापू की आज्ञा कौन टालेगा ? रुकिये मैं अभी लाई। (कहकर तेज़ी से अन्दर चली जाती है)

डाक्टर—बड़ी समझदार नर्स जान पड़ती है, मि० गाँधी।

मि० गाँधी—जी हां, मेरे घर में तो वह नर्स नहीं बल्कि अपनी लड़की की तरह रहती है। अगर इतनी बेतकल्लुफ़ी से काम न लूं तो तुरंत नाराज़ हो जाती है। मणि की सेवा यही तो करती है। जब से वह बीमार पड़ा इसने छन भर चैन नहीं लिया। आंखों में जान पड़ता है इसके नींद ही नहीं, जब देखिये जग रही है।

(मिस जेन चीनी की तश्तरियों में चाय की दो प्यालियां

रखकर लाती है। प्यालियों के ऊपर दो तश्तरियों में बिस्किट रक्खे हैं। चाय की प्यालिया दोनों आदमियों के सामने रखकर बिस्किट की तश्तरिया भी रख देती है।)

मिस जेन—बस?

मि० गांधी—बस, और क्या? मि० रुस्तम और कुछ मंगाऊं?

डाक्टर—जी नहीं, धन्यवाद।

मि० गांधी—अच्छी बात।

मिस जेन—तो मैं अब जाऊं मणि के पास?

मि० गांधी—जाओ।

(मिस जेन का प्रस्थान)

मि० गांधी—मणि की बीमारी के विषय में आपका क्या विचार है?

डाक्टर—क्या बताऊं मि० गांधी (चाय का प्याला होंठ से लगाते हुए) बीमारी तो बहुत ज़ोर पर है।

मि० गांधी—मेरा भी ऐसा ही अनुमान है।

डाक्टर—देखिये, उसके 'यूरीन' की जांच करके तब कोई निश्चित दवा बतलाऊंगा (बिस्किट उठाता है)

मि० गांधी—(चाय का एक घूंट लेते हुए) तब तक क्या किया जाय?

डाक्टर—मणि की खुराक तो अभी से बदलनी पड़ेगी।

मि० गांधी—क्यों ? अब क्या देना होगा ?

डाक्टर—(चाय पीते हुए) अण्डा और मुर्गी का शोर्बा।

मि० गांधी—(चाय की प्याली रखते हुए) अण्डा ? और मुर्गी का शोरबा ?

(कुछ चकित, चिन्तित और मौन हो जाते हैं।)

डाक्टर—क्यों मि० गांधी, आप इतने चिन्तित क्यों होगये ?

मि० गांधी—कुछ नहीं, यही सोच रहा हूं कि ये चीजें मणि को कैसे दी जायंगी ?

डाक्टर—कैसे दी जायंगी ?···ये तो हर जगह मिल सकती हैं ; न हो तो कहिये मैं भेज दूंगा, इसमें परेशानी की तो बात नहीं जान पड़ती।

मि० गांधी—नहीं मि० रुस्तम, मेरी परेशानी का कारण कुछ और ही है।

डाक्ट—वह क्या ?

मि० गांधी—हम लोग हैं वैष्णव। अन्नाहार के सिवा और सभी चीजें हमारे लिये वर्जित हैं। फिर

अण्डा और शोरबा भला बच्चे को कैसे दूं ?

डाक्टर—(जरा सा मुस्कराते हुए) तो इतनी छोटी सी चीज़ आपके चिन्ता का कारण बन गई है ?

मि० गांधी—यह छोटी सी चीज़ नहीं है डाक्टर; क्या आप कोई दूसरी चीज़ नहीं बतला सकते ?

डाक्टर—दूसरी चीज़ बतलाने का अभी तो सवाल ही नहीं उठता मि० गांधी; दवा और पथ्य के रूप में हम डाक्टर लोग सभी कुछ देते हैं और हमने देखा है कि बड़े बड़े कट्टर हिन्दू परिवारों में भी इस पर आपत्ति नहीं उठाई जाती। फिर आपको इतनी उलझन क्यों ?

मि० गांधी—मि० रुस्तम, मैं इसे धर्म के विरुद्ध समझता हूं।

डाक्टर—आप तो विलायत हो आये हैं मि० गांधी। आपने इतनी ऊंची शिक्षा पाई, विदेश-यात्रा की, अंग्रेजों के घर में खाना खाया, इतने पर भी यह संकीर्णता ? यह पहेली मेरी समझ में तो बिल्कुल नहीं आती।

मि० गांधी—यह सचमुच एक पहेली है मि० रुस्तम। अपने जीने के लिये किसी और जीव की

हत्या की जाय ऐसे सिद्धान्त का प्रतिपादन मैं स्वप्न में भी नहीं कर सकता। अपने जीवन को मैं इतना अमूल्य मानता ही नहीं जो किसी और की जान लेकर संसार में टिक सके; इससे अच्छा तो मैं अपनी ही जान दे देना समझता हूं।

डाक्टर—यह तो आपकी हठ-धर्मी है मि० गांधी और इसके लिये अभी आपको बहुत बड़ी कीमत अदा करनी पड़ेगी। मान लीजिये आप अपने हट पर टिके रहे और आपने मणि को खो दिया—भगवान न करे कभी ऐसा हो; तो क्या आप अपने को किसी भी तरह क्षमा कर सकेंगे?

मि० गांधी—यही तो मेरा असमंजस है मि० रुस्तम; पर मेरी धर्म की मर्यादा मेरे प्रिय से प्रिय स्वजन की प्राण-रक्षा के लिये जीव-वध करना श्रेयस्कर नहीं समझती। इतना ही नहीं, इसे अनुचित, अधर्म और घोर पाप समझती है; हां, मणि यदि काफ़ी बड़ा और समझदार होता तो मैं उससे सलाह ले लेता और उसे अपने लिये जैसा उचित जान पड़ता, वह निर्णय करता। तब मुझको ज़रा भी आपत्ति न होती, पर इस समय तो इस अबोध बालक के लिये भी

मुझे ही सोचना है; फिर जो पथ मैं अपने लिये उचित समझता हूं वही अपने पुत्र के लिये भी लाभ-कर क्यों न समझूं ?

डाक्टर—मैं आपके इस विचार से सहमत नहीं हूं मि० गांधी। देखिये आप में और आपके बच्चे में अन्तर है। वह आपका पुत्र होकर भी एक स्वतंत्र व्यक्ति है। आप उसके पोषक हो सकते हैं पर नाशक नहीं हो सकते। आप अपना पितृ-धर्म पालन कीजिये, फिर सयाना होने पर अपनी राह वह स्वयं खोज लेगा। यही क्या ज़रूरी है कि बड़ा होकर वह आपकी हठ-धर्मी को ही उचित धर्म समझेगा ?

मि० गांधी—आप बिल्कुल ठीक कह रहे हैं डा० रुस्तम, परन्तु यही क्या पता है कि अडे और मुर्गी के शोरबे से वह बिल्कुल अच्छा हो जायगा; निश्चय रूप से कौन कह सकता है कि इस बीमारी के लिये यही दो चीजें संजीवनी बूटी हैं, और यदि हों भी तो जिस

आप पुत्र को खो ही देना समझते हैं ?

मि० गांधी—धर्म का पथ बड़ा गहन है मि० रुस्तम। (एकटक दूर आकाश के ऐक कोने में देख रहे हैं, मानों अदृष्ट के पाठ पढ़ रहे हों।)

डाक्टर—आप बड़े निष्ठुर पिता हैं मि० गांधी।

मि० गांधी—ऐसे ही आपत्तिकाल में सच्चे धर्म की परख होती है मि० रुस्तम। मैं अपनी ज़िम्मेदारी को खूब समझ रहा हूं, मेरे भीतर जो हृदय-मन्थन चल रहा है उसे मेरा ही मन जानता है डाक्टर; पर क्या करूं ये चीजें देने के लिये मेरी आत्मा तनिक भी प्रस्तुत नहीं होती।

डाक्टर—ऐसी दशा में मैं तो मणि की दवा नहीं कर सकता, आप चाहे जिसे बुला लीजिये।

मि० गांधी—(आखें फाड़कर डाक्टर का मुँह देखते हैं) आप दवा नहीं कीजियेगा ?...आप भी साथ छोड़ रहे हैं डा० रुस्तम! (याचना की दृष्टि से डाक्टर को

ही नहीं रखने देते। ऐसी दशा में मैं लाचार हूं। बताइये आप हमसे क्या चाहते हैं ?

मि० गांधी—क्या बताऊं, यदि आप इलाज न कीजियेगा तो मैं और किसी भी डाक्टर को न बुलाऊंगा।

डाक्टर—(चकित होकर) किसी भी डाक्टर को न बुलाऊंगा ? क्या मतलब ? फिर आप क्या कीजियेगा ?

मि० गांधी—अब मैं मणि को 'कूने' के उपचारों से अच्छा करूंगा। उसे टब में कटि-स्नान कराऊंगा। नारंगी के रस में पानी मिलाकर दूंगा। जब तक अच्छा नहीं होता यही दवा चलेगी। आगे राम मालिक है, प्रभु की जैसी इच्छा। पर इसमें आपको भी मेरी सहायता करनी होगी। बोलिये, आप तैयार हैं ?

डाक्टर—कूने के उपचार में मेरा ज्ञान तो बिलकुल शून्य है। अच्छा बताइये, आप हमसे कौन सहायता चाहते हैं ?

मि० गाँधी—देखिये, हमको इस बालक की नाड़ी और हृदय देखना नहीं आता। यदि आप प्रति दिन आकर यह काम कर लिया करें और मणि के शरीर में होने वाले फेरफारों को हमें बता दिया करें तो मैं

आपका बड़ा उपकार मानूंगा।

डाक्टर—इतना करने के लिये तो मैं सहर्ष तैयार हूं, मि० गांधी। भगवान आपके उपचार में आपकी सहायता करे और मैं क्या कहूं। धर्म की छानबीन आप इस सूक्ष्मता के साथ करते हैं इसका पता हमें बिलकुल न था, फिर उसे व्यवहार में लाने की चेष्टा तो आपकी अलौकिक है। हमें पूर्ण विश्वास है कि भगवान आपकी प्रार्थना सुनेंगे। अच्छा, अब चलूं।

मि० गांधी—अच्छी बात है, फिर कब दर्शन दीजियेगा?

डाक्टर—कल सवेरे।

(दोनों जाते हैं। इसी बीच मिस जेन आकर चाय की प्यालिया, प्लेटे उठा ले जाती है। मि० गाधी डाक्टर को दरवाज़े के बाहर पहुँचा कर लौट आते हैं।)

मि० गांधी—(ज़रा जोर से) मिस जेन...... मिस जेन!

मिस जेन—(भीतर से) अभी आई।

(मि० गाधी थके और चिन्तित से कोच पर बैठ जाते हैं।)

मिस जेन—(सामने खड़ी होकर) कहिये, क्या

आज्ञा ?

मि० गांधी—मणि का क्या हाल है ?

मिस जेन—बुखार बढ़ता जा रहा है, मुझे तो बड़ी चिन्ता हो रही है बापू। डाक्टर रुस्तम ने क्या कहा ?

मि० गांधी—कहा क्या, वे दवा नहीं करेंगे।

मिस जेन—दवा नहीं करेंगे ? (चकित होकर) क्यों ?

मि० गाँधी—वे कहते हैं कि मणि को अंडा और मुर्गी का शोरबा दिया जाय। मैं इसके लिये बिल्कुल तैयार नहीं हूं; फिर दवा कैसे हो ?

मिस जेन—तो आपको इसमें क्या आपत्ति है, बापू ?

मि० गाँधी—एक जीव की रक्षा के लिये दूसरे जीव का बध मैं पाप समझता हूं जेन; तुम इस चक्कर में न पड़ो, इसे तुम समझ नहीं सकती।

मिस जेन—मैं आपकी बातें खूब समझती हूं बापू। आपकी बातें सुनकर बार बार प्रभु ईसा मसीह की याद आजाती है। (श्रद्धा से आंखे नत करके) क्या पता, आप उन्हीं के अवतार हों।

मि० गाँधी—दुत् पगली, जाने कहां की बातें

करती है !

मिस जेन—अच्छा, अब मणि के लिये क्या करना चाहिये ?

मि० गाँधी— देखो, उस पर मैं कूने का उपचार करना चाहता हूं। इस पर मुझे पूर्ण विश्वास है। तुम टब में पानी लेकर तीन मिनट तक उसे स्नान कराओ, फिर सारा बदन पोंछकर एक भीगी चादर ओढ़ा दो और कम्बल से ढक दो, सिर पर भीगा तौलिया रख दो, देखो शायद पसीना आये।

मिस जेन—अच्छी बात है, चलिये न आप भी उसी के पास बैठिये।

मि० गाँधी—नहीं जेन, इस समय मेरे भीतर तूफ़ान चल रहा है, मेरा जी घबरा रहा है। मैं ज़रा सा बाहर टहलने जा रहा हूं। तुम अभी इस उपचार को करो।

(मि० गाँधी का प्रस्थान, मिस जेन रोगी के कमरे मे जाती है; भीतरी परदा उठता है, रोगी दिखाई देता है; मिस जेन एक टब लाती है और मणि को उसमें बिठालती है)

मणि—पानी तो बड़ा ठंडा है, बहन जी।

मिस जेन—हां मणि, चुपचाप पड़े रहो (घड़ी देखकर)······अब तीन मिनट होगये, अब तुम्हें इसमें से निकालूंगी। मणि, ज़रा सा सीधे बैठ जाओ।

(मणि सीधा हो जाता है। मिस जेन उसे उठाकर चारपाई पर लिटाती है और एक चादर पानी में भिगोकर निचोड़ती है, फिर उससे मणि को ढकती है, सिर पर भीगा तौलिया रखकर ऊपर से कम्बल ओढ़ा देती है।)

मिस जेन—अब कैसा जी है मणि?

मणि—शरीर तवे की तरह जला जा रहा है, बहन जी।

मिस जेन—अच्छा, ज़रा दोनों आंखें मूदकर सोने की कोशिश तो करो।

मणि—पलक तो लगते नहीं, बहन जी। क्या सोऊं? (आंखे बन्द करता है, भीतरी परदा गिरता है)

(मि० गांधी का प्रवेश; चिन्तित मुद्रा में)

मि० गाँधी—(टहलते टहलते ज़रा रुक कर) यदि इस उपचार से भी बुख़ार न गया तो क्या होगा? बीमारी कहीं और बिगड़ गई तब तो मैं मुंह भी दिखाने लायक़ न रहूंगा; लड़का यदि जाता रहा तो? (भयंकरता सोच कर कांप उठते हैं) भाई साहब क्या

कहेंगे ?···दुनिया क्या कहेगी ?···तो किसी और डाक्टर को बुलवाऊं ?···क्या कहावत है ? 'नीम हकीम ख़तरा जान।' अरे तो मैं मणि की जान कहीं ख़तरे में तो नहीं डाल रहा हूं ?···क्या होगा हे प्रभो···(एकाएक प्रभु ईसा की तस्वीर पर उनकी दृष्टि जाती है, वहीं घुटने टेककर, हाथ जोड़कर बोल उठते हैं; बैक-ग्राऊंड के लिये क्षीण स्वर में करुण राग का बाजा बजता है) संसार के मसीह, आज मेरी लाज रखो, तुमने एक नहीं, दो नहीं, हज़ारों, लाखों मुर्दों को जिला दिया, आज मेरी बारी है प्रभु, मेरे मणि को प्राण-दान दो। तुमने 'अहिंसा परमोधर्मः का संदेश दिया, मैं उसी तलवार की धार पर चल रहा हूं नाथ! बड़ी तेज़ है इस धर्म की धार; अब तुम्हीं लाज रखो, मेरे मसीह! (उठकर फिर टहलने लगते हैं) दवा!···दवा भला कोई डाक्टर क्या करेगा ? जीवन और मृत्यु की दवा तो भगवान के पास रहती है, उसकी जैसी इच्छा! यदि मणि को वह बचायेगा तो भला कौन उसे मार सकेगा, यदि वह बुलायेगा तो किसकी मजाल है जो रोक ले···(टहलते हुए राम, कृष्ण की मूर्ति पर दृष्टि जाती है; रुककर हाथ जोड़कर)

क्या देखते हो प्रभु, मेरा संकट तुम न हरोगे तो कौन हरेगा ? संकट-हरण, मैं न तो गज हूं, न गणिका हूं, न द्रौपदी हूं, पुकारना भी तो नहीं आता नाथ। (आसू भरकर) मेरी कैसे सुनोगे ? कब सुनोगे ? बोलो न ? प्रभो, आशीर्वाद दो। (माथा टेकते हैं; इतने में आवाज आती है 'बापू'......'बापू'। उठकर भीतर जाते हैं, भीतरी परदा उठता है। मिस जेन स्टूल को दीवार से लगाकर ज़रा सा झपकी ले रही है)

मि० गाँधी—(धीरे से) क्या है बेटा ?

मणि—आगये बापू ?

मि० गाँधी—हां, मेरे लाल, कहो क्या हाल है ?

मणि—मुझे इस अग्नि-कुण्ड में से निकालिये न। मैं तो मारे आग के मरा जा रहा हूं।

मि० गाँधी—क्यों पसीना छूट रहा है क्या, मणि ?

मणि—अरे, मैं तो पसीने से तर होगया हूं, बापू! आप जल्दी क्यों नहीं करते ?

मि० गांधी—अच्छा बेटा, घबरा न।

(मि० गांधी कम्बल हटाकर मणिलाल का ललाट पसीने से तर देखते हैं; फिर तौलिया लेकर सारा बदन

पोंछते हैं।)

मि० गाँधी—कैसा जी है, बेटा?

मणि—बड़ी गर्मी है, बापू?

(मि० गाधी थर्मामीटर से टेम्परेचर लेते हैं, ६६ बुखार है)

मि० गांधी—(बड़ी प्रसन्नता से) अब तुम्हारा बुखार उतर रहा है, मणि।

मणि—यह कैसे होगया, बापू?

मि० गाँधी—यह तो 'राम जी की कृपा' है बेटा। अब भगवान का नाम लेकर सो जा।

मणि—तुम भी मेरे पास सोओ, बापू। बहिन जी कहां हैं?

मि० गाँधी—धीरे बोल बेटा, आज उनकी भी ज़रा सी आंख लगी है।

मणि—(धीरे से) तुम आओ न?

मि० गाँधी—अच्छा, अभी आया।

(फिर राम, कृष्ण की मूर्ति के पास जाकर घुटने टेक कर हाथ जोड़ते हैं; आवाज़ आती है)

मि० गांधी—तुमने मेरी लाज रख ली, प्रभो।

(बाहरी परदा गिरता है)

बैरिस्टर का स्वागत !

पहला दृश्य

[स्थान—मरित्सवर्ग रेलवे स्टेशन, रात के दसबजे।

समय—सन् १८९३ ई०, जाड़े के दिन।

स्टेज के बीच में एक परदा ऐसा लटक रहा है जो ट्रेन के डब्बे के बाहरी चित्र से चित्रित है। देखने में ट्रेन के डब्बे जैसा ही दिखाई दे रहा है। उस पर अंग्रेज़ी में लिखा है 'ब्लाक लेटर्स' मे "NATAL TO CHARLESTOWN" यानी 'नेटाल से चार्ल्स-टाउन।' परदे का रंग भूरा है, उसमें दो खिड़किया ट्रेन की खिड़कियों की तरह कटी हैं। दरवाजा भी कटे परदे का बना है, जो खोला और बन्द किया जा सकता है। उसके पीछे आमने-सामने दो लम्बी लम्बी कोचें रखी हैं जो फर्स्ट क्लास वाले डब्बे की बर्थ का काम करती हैं। ट्रेन के डब्बे के भीतर हरा बल्ब जल रहा जिससे आखों पर जोर न पडे और प्रकाश में भी सोया जा सके। बाहर प्लैटफार्म है। एक ओर एक बड़ी घड़ी लगी है, एक बड़ा बल्ब भी इधर ही जल रहा है। एक कोच पर एक गोरा मुसाफिर सो रहा है जो स्टेशन आने पर कभी कभी खिड़की से झांक लिया करता है। दूसरे कोच पर मि० गाधी बैठे हैं। ये २४ वर्ष के नवयुवक हैं। बैरिस्टरी पास करने के बाद

दक्षिण अफ्रीका प्रैक्टिस के लिये गये हैं। सांवला रंग है, नये ठाठ हैं, स्ट्राइप्ड सर्ज के काले सूट पर स्ट्राइप्ड ही टाई बंधी है जो सफ़ेद कालर पर और भी खिलती है। नाइट कैप, ऊनी अल्स्टर, चमड़े की अटैची और एक ट्रंक भीतर रखे हैं। ये टालस्टाय की पुस्तक What to do 'अब क्या करें' पढ़ रहे हैं। इतने में ट्रेन का गार्ड आता है। एक गोरा, अवस्था ३० वर्ष। काला सूट पहने, ऊपर से काला ही अल्स्टर भी डाले है, चेहरे से रोब टपकता है।]

गार्ड—(डब्बे के भीतर झांककर जरा ठिठक जाता है। फिर मि० गांधी की ओर संकेत कर बोलता है।) तुम यहां कैसे ?

मि० गांधी—क्यों ?

गार्ड—(चिढ़कर) यह फ़र्स्ट क्लास है—फ़र्स्ट क्लास।

मि० गांधी—(चकित होकर, मुस्कराते हुए) तो ?

गार्ड—(और भी गुस्से में) अबे तो के बच्चे, होश में है या नहीं ? मैं कहता हूं यह फ़र्स्ट क्लास है।

मि० गांधी—(और भी चकित होकर) तो मेरे पास

गार्ड—(टिकट हाथ में लेकर डब्बे के अन्दर फेंकते हुए) तुम्हारे टिकट की ऐसी-तैसी, 'यू बलैक इडियट,' निकलो इस डब्बे से, बाहर चलो, जल्दी करो। (हाथ से निकलने का इशारा करता है।)

मि० गांधी—(हक्का-बक्का हो जाते हैं) आखिर निकालने का कोई कारण भी है या यूं ही? मेरे पास टिकट तो है, मैं नहीं निकल सकता।

गार्ड—(और गुस्से मे) तुम काला आदमी; कुली होकर फ़र्स्ट क्लास में बैठेगा? जल्दी निकलते हो या सिपाही बुलाना पड़ेगा?

मि० गांधी—(जरा ताव में आकर) यदि ऐसी ही बात है तो आप सिपाही बुलवाइये, मैं यूं नहीं उतर सकता।

गार्ड—(कुछ सकपकाकर) 'यू डेविल' नहीं समझता, सिपाही तुमको घसीट कर प्लैटफ़ार्म पर डाल देगा। तुम्हारा सब माल-असबाब तितर-बितर

गार्ड—(ताव में) अच्छी बात! (जाते हुए) तुम्हारी खोपड़ी उलट गई है। अभी सीधी किये देता हूं।

(प्रस्थान)

मि० गांधी—(स्वतः) मैं तो निराली दुनिया में पहुंच गया! फ़र्स्ट क्लास का टिकट लेकर भी फ़र्स्ट क्लास में नहीं बैठ सकता! ऐसा अंधेर तो विलायत में भी नहीं था जो इन लोगों का आदि स्थान है। देखें क्या होता है। भगवान मालिक है।

(इतने में गार्ड दो सिपाहियो के साथ आता दिखाई देता है। मि० गांधी अपना टिकट जेब में उठाकर रखते हैं और जमकर अपनी सीट पर बैठ जाते हैं।)

गार्ड—(मि० गांधी के सामने आकर) अब भी खुद उतर रहे हो या हाथ लगाना पड़ेगा?

मि० गांधी—(दृढ़ता से) मैंने तो पहले ही कह दिया मैं स्वयं नहीं उतर सकता।

गार्ड—(क्रोध से आगबबूला होकर) उतरेगी तो तुम्हारी मरी खाल। सिपाही, इस काले आदमी का सामान उठाकर प्लैटफ़ार्म पर डाल दो और इसे भी घसीट कर गाड़ी से उतार दो। (दोनों सिपाही फाटक खोलकर डब्बे में घुसते हैं, मि० गाधी का ट्रंक घसीट कर

उतारते हैं। इतने में गोरा मुसाफिर जग पड़ता है। वह उठ बैठता है और गार्ड से बातें करने लगता है। इधर सिपाही मि० गांधी का और सामान उतारते हैं।)

मुसाफ़िर—(गार्ड से) क्या मामला है?

गार्ड—(मि० गांधी की ओर इशारा करके) यह काला आदमी आपके डब्बे में घुस गया है। इसी को उतार रहा हूं।

मुसाफ़िर—(बड़े इतमीनान से) अच्छा! (फिर सो जाता है मानों यह कोई खास या बड़ी भारी बात न हो।)

गार्ड—(मि० गांधी से) अब भी बोलो, उतर रहे हो या सचमुच घसीटना ही पड़ेगा।

मि० गांधी—(भयंकर दृढ़ता से) सचमुच घसीना ही पड़ेगा।

गार्ड—(सिपाहियों से) अब मुंह क्या देखते हो, पकड़कर डाल दो गाड़ी से नीचे।

(सिपाही एक पढ़े-लिखे 'जेण्टिलमैन' को पकड़कर बुरी तरह घसीटने में जरा सा हिचकते हैं, पर फिर एक लपककर मि० गांधी की बाईं बांह पकड़कर बाहर घसीटने लगता है। गार्ड सोचता है, 'यह अजीब आदमी है।' मि० गांधी दाहिने हाथ से बर्थ की बैक पकड़ लेते हैं। फिर गार्ड दूसरे सिपाही को डाटता है।)

गार्ड—(दूसरे सिपाही से) अबे, तमाशा देखने आया है, पकड़ ले दूसरा हाथ भी और घसीट ले बाहर।

(दूसरा सिपाही भी दाया हाथ पकड़कर बाहर खींचता है और दोनों मिलकर मि० गाधी को घसीट कर प्लैटफार्म पर लाते हैं।)

गार्ड—(घृणा से) अब देख लिया फर्स्ट क्लास में बैठने का मज़ा ?

मि० गांधी—जी हां, जनाब।

गार्ड—अब जाड़े में रात भर यहीं मज़े करो। (गार्ड 'ह्विसिल' बजाता है ट्रेन छूटने के लिये। सिपाही मि० गाधी का सामान उठाकर चल देते हैं। मि० गाधी प्लैटफार्म पर पड़े हैं। इसी समय परदा गिरता है। ये सभी काम एक साथ होते हैं।)

पटाक्षेप

दूसरा दृश्य

[स्थान—परडी; सिगरम (घोड़ा-गाड़ी, मुसाफ़िरों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लेजाने के लिये) खड़ी है; दिन के तीन बजे।

स्टेज पर लकड़ी की बनी हुई ज़रा मज़बूत गाड़ी और 'पेन्टेड घोड़ा रखना होगा। यह चीज़ रथ की तरह की होगी

जिसमें आगे कोचवान के बैठने के लिये एक जगह होगी और दूसरी उसी के बगल में कण्डक्टर के बैठने के लिये। गाड़ी खुली होगी। भीतर चार सीटें होंगी। गाड़ी स्टेज पर साइड से खड़ी की जायगी ताकि सभी बैठने वाले आसानी से दिखाई दें। पीछे के परदे पर सड़क बनी होगी, दूरी पर पहाड़ियां और दोनों ओर हरे-भरे मैदान होंगे। कोचवान एक एशियाटिक आदमी है, रंग सावला, अवस्था ४० वर्ष, सेकेण्ड हैण्ड गरम सूट पहने हुए, चेहरे से कभी दब्बूपन टपकता है कभी शैतानी; उसके बाईं ओर कोडे को अड़ाने के लिये एक सुराख बना है जिसमें कोड़ा खड़ा है। गाड़ी के भीतर मि० डारसी और मिसेज डारसी बैठे हैं। मि० डारसी की अवस्था ३५ वर्ष की होगी। देखने से समझदार और भलेमानुस जान पड़ते है। कोट की एक बाह जेब में लटक रही है। शायद किसी युद्ध में गोली लगने से बाईं भुजा खो बैठे। ये स्ट्राइप्ड सर्ज के सूट पर वैसा ही ओवर-कोट डाले बैठे हैं। मि० डारसी के सामने वाली सीट पर मिसेज डारसी सिगरम में बैठी हैं, अवस्था २५ वर्ष होगी। उनकी बड़ी बड़ी आखों से प्रेम और दया सहज ही टपकती है। वे भी ऊनी पेटीकोट के ऊपर से एक रोयेदार 'रैपर' डाले हुए हैं। उनके सिर पर छतरीदार हैट है, उनकी चाल-ढाल और तौर-तरीके ऐसे हैं कि वे सहज ही किसी ऊंचे घराने की महिला जान पड़ती हैं। सभी उनके रोब में हैं गोकि वे किसी पर भी अपना रोब जताना नहीं चाहतीं। कण्डक्टर परेशान है।

वह सिगरम का इनचार्ज है। ३२ वर्ष का गोरा युवक, चेहरे से रोब और ओछापन दोनों टपकते हैं, भूरे सूट पर लाल रंग की टाई बाधे है। वह चाहता नहीं कि कोई काला आदमी मिसेज़ डारसी के साथ बैठे। उसने मि० गाधी को आते देख लिया है और पहले ही उसने कोचवान की बगल में बैठने का इशारा कर दिया है, और स्वयं मिसेज डारसी के सामने वाली सीट पर जा बैठा है। गाड़ी परडी पहुँच गई है। अब वह गाड़ी रुकवाता है। यहीं पर परदा उठता है।]

कण्डक्टर—(गाड़ी से उतर कर मि० गाधी के सामने आकर) आप अपना टिकट दिखाइये।

मि० गांधी—(कोचवान की बगल में बैठे बैठे) टिकट तो आप एक बार देख चुके हैं।

कण्डक्टर—लाइये, मैं फिरसे देखना चाहता हूं।

मि० गांधी—कारण ?

कण्डक्टर—कारण बाद को पूछियेगा, पहले दिखाइये।

मि० गांधी—(टिकट निकाल कर देते हुए) लीजिये, देखिये।

कण्डक्टर—(टिकट लेकर देखते हुए) इस पर तारीख़ तो परसों की पड़ी है ?

मि० गांधी—जी हां।

कण्डक्टर—तो आपको कल ही यहां आजाना चाहिये था, कल आप कहां रहे ?

मि० गांधी—बात यह है कि मरित्सवर्ग स्टेशन पर परसों रात को गार्ड ने मुझे फर्स्ट क्लास से उतार दिया और गाड़ी चल दी। परसों रात भर और कल दिन भर मैं वहीं रह गया। इसी से यहां आने में २४ घण्टे की देर होगई।

कण्डक्टर—(हंसते हुए) ओ हो! आप फर्स्ट क्लास में बैठने की हिम्मत रखते हैं ?...आप कितने दिन से हैं यहां ?

मि० गांधी—अभी तो तीन चार दिन ही आये हुए हैं।

कण्डक्टर—हां, हां, तभी तो। आप करते क्या हैं ?

मि० गांधी—मैं बैरिस्टर हूं।

कण्डक्टर—(आश्चर्य से) अच्छा! बैरिस्टर ?... ठीक है कुली बैरिस्टर! क्यों ?

मि० गांधी—(मन में कुछ बुरा मानकर) जी, हां।

कण्डक्टर—तो आपका यह टिकट तो ख़राब

गया। आप इस टिकट से नहीं जा सकते।

मि० गांधी—जी नहीं, ऐसी बात तो नहीं है।

कण्डक्टर—क्यों ?

मि० गांधी—बात यह है कि आपकी कम्पनी का यह नियम है कि चौबीस घंटे लेट होने पर टिकट जायज़ रहता है।

कण्डक्टर—हां, क्यों नहीं, आप बड़े कानून जानने वाले हैं, बैरिस्टर हैं न; अच्छी बात है, आप यहां से हट जाइये, यहां मैं बैठना चाहता हूं।

मि० गांधी—क्यों ?

कण्डक्टर—क्यों से आपको क्या मतलब ? आप यह जगह छोड़िये, मैं जरा चुरुट पियूंगा और हवा खाना चाहता हूं।

मि० गांधी—तो अब मैं कहां बैठूं ?

कण्डक्टर—(पायदान की जगह को बताते हुए) वहां, (कोचवान से) ऐ कोचवान, देखो एक बोरे का टुकड़ा सामी के लिये नीचे रख दो।

(कोचवान एक फटा बोरे का टुकड़ा पायदान पर रखता है)

मि० गांधी—आप तो मेरा अपमान करते हैं,

मैं अपनी जगह नहीं छोड़ूंगा।

कण्डक्टर—क्या कहा? ···मैं अपनी जगह नहीं छोड़ूंगा? कारण?

मि० गांधी—क़ायदे से तो हमको सिगरम के भीतर बैठाना चाहिये था। पर पहला अपमान आपने यह किया कि हमें कोचवान की बग़ल में बैठाकर स्वयं गाड़ी में बैठे और अब जो हवा खाने की सूझी है तो हमें पायदान के पास बिठाते हैं। ऐसा तो नहीं होसकता।

कण्डक्टर—(बिगड़कर) यू ब्लैक नेव, ज़ुबान लगता है, तुम यूं नहीं उतरेगा। (पकड़कर घूंसे मारना आरम्भ कर दिया। मुसाफिर लोग चुपचाप देख रहे हैं। मि० गांधी दाहिने हाथ से एक पीतल की छड़ पकड़े हुए हैं, उनका बाया हाथ कण्डक्टर के दाहिने हाथ में है। वह मि० गांधी को गाड़ी से नीचे घसीट कर गिराना चाहता है ......थोड़ी देर तक यह तमाशा चलता है, फिर जी भर कर मारने के बाद कण्डक्टर हाफता और गालियां देता खड़ा होता है।)

कण्डक्टर—यू ब्लडी, डैम, बोल अब भी उतरेगा या नहीं?

मि० गांधी—हरगिज़ नहीं, जान चली जाय

पर उतरूंगा नहीं ।

कण्डक्टर—उतरेगी तो तेरी रूह। देख मैं तुझे कैसे उतारता हूं (फिर मारना शुरू करता है।)

मिसेज़ डारसी—(बीच ही में रोकते हुए) ओ कण्डक्टर, अब जाने दो बिचारे को; बहुत हो चुका।

कण्डक्टर—(मारना रोककर) नहीं मेम, मैं इसकी जान लेकर छोड़ूंगा। (लज्जित हो जाता है)

मिसेज़ डारसी—नहीं, नहीं, अब न मारो; सामी ठीक तो कहता है। क़ायदे से उसे गाड़ी के भीतर बैठना चाहिये। अच्छा, अब बस करो।

(कण्डक्टर मि० गांधी को छोड़ देता है)

मिसेज़ डारसी—(मि० गांधी से) तुम गाड़ी के भीतर चले न आओ, यहां बैठो। (मि० डारसी से) कोई जेण्टिलमैन जान पड़ता है। कहता है 'बैरिस्टर' हूं।

मि० डारसी—हां !

मि० गांधी—(मिसेज़ डारसी से) क्षमा कीजिये मैं यहीं रहूंगा।

मिसेज़ डारसी—नहीं, नहीं, तुम यहां बैठोगे, मेरी बात न टालो, चले आओ।

(मि० गांधी मिसेज डारसी के आग्रह को टाल नहीं

सकते। अब वह उठकर मिसेज़ डारसी की बगल में बैठ जाते हैं। कण्डक्टर कोचवान की बग़ल में बैठ जाता है और मि० गांधी को गालियां बकता जाता है।)

मि० गांधी—आपने मेरे ऊपर बड़ी कृपा की। धन्यवाद।

मि० डारसी—मुझे दुख है कि आपको इतनी मार खानी पड़ी।

मि० गांधी—यह तो मेरे चमड़े के रंग का दोष है, इसमें दुख की कोई बात नहीं।

मिसेज़ डारसी—आप तो बैरिस्टर हैं न। आप दावा कीजिये इस 'कण्डक्टर' पर। मैं आपकी मदद करूंगी। मैंने अपनी आंखों सब देखा है।

मि० गांधी—धन्यवाद, पर मैं अपनी निजी बेइज्ज़ती के लिये कोई दावा नहीं कर सकता। यह तो काले-गोरे की बीमारी है जिसकी दवा जरा कठिन है। हमें कण्डक्टर से कोई शिकायत नहीं।

(मिसेज़ डारसी और मि० डारसी एक दूसरे का मुंह देखते हैं। मानों आखों की राह कह रहे हों, 'अजीब आदमी है यह'।)

पटाक्षेप